www.emanjari.com

मंजरी

स्त्री के मन की

RNI Title Code: BIHBIL02442

अंक 31 वर्ष 2025

BIHAR TOURISM
Blissful Bihar

VISIT BIHAR

The place of Enlightenment and Wisdom. A world famous UNESCO heritage site Mahabodhi Temple.

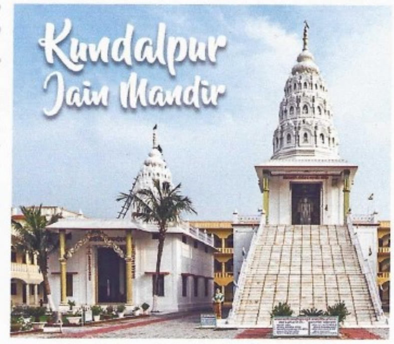

Kundalpur Jain Mandir holds both spiritual and historical significance as it is believed to be the birthplace of Lord Mahavira.

A sacred place built to commemorate the birthplace of Shri Guru Gobind Singh ji Maharaj, the 10th Guru of Sikhs.

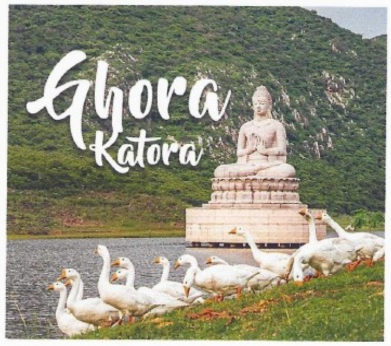

A picturesque natural lake with lush green surroundings.

One of the oldest and most prominent Hindu temples dedicated to Lord Vishnu where pilgrims perform 'Pind Daan' ritual for their ancestors.

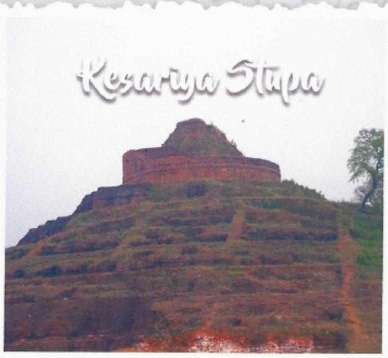

Situated in the East Champaran Kesariya Stupa is the Wolrd largest Stupa among all the buddhist stupas.

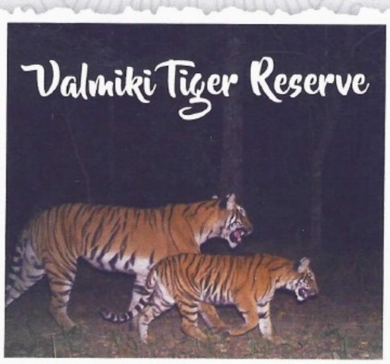

Situated in the West Champaran district of Bihar, the green landscapes with wildlife sightings is a must-visit spot for nature & adventure lovers.

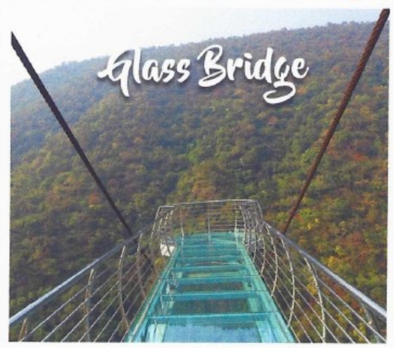

Bihar's first Glass Bridge at Rajgir's Nature Safari offers a breathtaking view of the beautiful surroundings.

Best Places to Visit in Bihar

BIHAR TOURISM
Blissful Bihar

"Bihar, a land of rich cultural and spiritual heritage, offers a blend of history, spirituality, and natural beauty. From the UNESCO World Heritage Site Mahabodhi Temple to the serene Ghora Katora Lake and the wild allure of Valmiki Tiger Reserve, the state is a treasure trove for travelers. Explore timeless temples like Vishnupad Temple, dedicated to Lord Vishnu, and Kundalpur Jain Temple, celebrating Lord Mahavira's birthplace. Don't miss Patna Sahib, the birthplace of Guru Gobind Singh Ji, the 10th Sikh Guru. Bihar invites you on a journey of sacred shrines, scenic landscapes, and unmatched tranquility."

@tourismbihargov

www.tourism.bihar.gov.in

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है **'मंजरी'**।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी कोशिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10—30 लोगों का एक ढीला—ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग—अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रक्रियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, क्रियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ—साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवेदनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामा. जिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में परी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके क्रियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न—भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेहद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

संरक्षण

पद्मश्री स्वर्गीया डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाज शास्त्र पटना विवि

परामर्श

डा. शरद कुमारी
सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
स्वतंत्र लेखिका एवं शोधकर्ता

सुजाता गुप्ता
लेखिका, कवयित्री एवं अनुवादक

संपादकीय

भारत के गाँवों से लेकर शहरों तक, "डायन" शब्द सिर्फ किसी मिथकीय डर की कहानी नहीं, बल्कि आज भी जीवित सामाजिक यथार्थ है। यह शब्द उस स्त्री पर ठोंका गया अपराध है जिसने अपनी आवाज बुलंद की, जिसने विरासत, जमीन, अधिकार या आत्मसम्मान माँगने की हिमाकत की। "एक थी डायन" दरअसल एक ऐसी औरत की कहानी है– जो इंसान थी, लेकिन समाज ने उसे राक्षसी ठहराया। और जब समाज बेरहम हुआ, तो कानून खामोश रहा।

डायन वह नहीं होती जो तंत्र–मंत्र जानती है; डायन वह बना दी जाती है जो 'मर्यादा' से बाहर निकलती है। सदियों से स्त्रियों की स्वतंत्रता को दबाने के लिए समाज ने 'डायन', 'चुड़ैल', 'अभिचारिणी' जैसे शब्द गढ़े। यह भाषाई हिंसा है– जहाँ शब्द ही शस्त्र बन जाते हैं।

सामाजिक दृष्टि से, डायन प्रथा ग्रामीण इलाकों में जमीन के विवाद, जातिगत सत्ता–संघर्ष और पितृसत्तात्मक नियंत्रण का साधन रही है। किसी विधवा, एकाकी या संपत्ति वाली महिला को "डायन" घोषित कर देना अक्सर पुरुष सत्ता का औजार बन जाता है– ताकि वह उसका हक छीन सके, या उसे समाज से बहिष्कृत कर सके।

भारत में झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, ओडिशा और असम जैसे राज्यों में "डायन शिकार" के खिलाफ अलग–अलग राज्यीय कानून बने हैं, लेकिन एक राष्ट्रीय स्तर पर स्पष्ट और सख्त कानूनी ढाँचा अब भी नहीं है। 2001 से अब तक सैकड़ों महिलाएँ "डायन" कहकर मारी गईं, निर्वस्त्र कर सड़कों पर घुमाई गईं, लेकिन न्याय की दर शर्मनाक रूप से कम है। कानून सिर्फ कागजों में मौजूद है, न्यायालय तक पहुँचना तो दूर, पुलिस तक पहुँचना ही अपने आप में साहसिक काम है। कई बार तो पुलिस भी इन्हीं सामाजिक पूर्वाग्रहों से दूषित होती है। इस तरह 'खामोश कानून' और 'बेरहम समाज' एक–दूसरे के पूरक बन जाते हैं।

समाज हमेशा 'संरक्षक' होने का दावा करता है, पर असल में वह नियंत्रण चाहता है। "डायन" कहलाने वाली स्त्री उस सामाजिक ढाँचे के लिए खतरा होती है क्योंकि वह सवाल करती है, परंपरा को चुनौती देती है, और अपने अस्तित्व को "पाप" नहीं मानती। यह समाज उसी को सम्मान देता है जो झुकती है। जो झुकने से इंकार करे, वह 'डायन', 'वेश्या' या 'असभ्य' कहलाई जाती है। यही समाज का नृशंस चेहरा है, जो हत्या को संस्कृति के नाम पर वैध ठहराता है, और प्रतिरोध को अपराध घोषित कर देता है।

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

आवरण चित्र

वरिष्ठ अतिथि कलाकार
अनु प्रिया

लोगो डिजाइन

दीया भारद्वाज

प्रबंधन / व्यवस्था

राहुल कुमार
कुमार गौरव

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612.2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

फेमिनिज्म की दृष्टि से 'डायन' एक प्रतीक है– विद्रोह का, ज्ञान का, और भय का। डायन वह है जो मना करती है– घर की सीमाओं में कैद रहने से, चुप रहने से, झूठी इज्जत की दीवारों से। यूरोप में डायन–शिकार (witch hunt) के जरिए जैसे बुद्धिमान, उपचारक, औरतों को जला दिया गया–भारत में भी वही सिलसिला अलग नाम से चलता रहा। फर्क बस इतना है कि यहाँ यह जादू–टोना नहीं, बल्कि औरत की चेतना से डर है। अब समय है– खामोशी तोड़ने का– अगर कानून को सचमुच न्याय का माध्यम बनना है, तो उसे सिर्फ "विधेयक" पारित करने से आगे बढ़ना होगा। जरूरत है सामाजिक शिक्षा, स्थानीय पंचायतों की जवाबदेही, और मीडिया द्वारा संवेदनशील प्रस्तुति।

मंजरी का यह अंक "एक थी डायन" केवल किसी एक औरत की कहानी नहीं बल्कि हर उस औरत की कहानी है जिसे समाज ने अपने भय से कुचल दिया। कानून की खामोशी और समाज की बेरहमी के बीच, वह औरत अब भी पुकारती है– "मैं डायन नहीं थी, मैं बस जिंदा रहना चाहती थी।''

नीना श्रीवास्तव

श्रोतः अलका प्रमोद (www.rekhta.org)

अनुकम

4

12

14

16

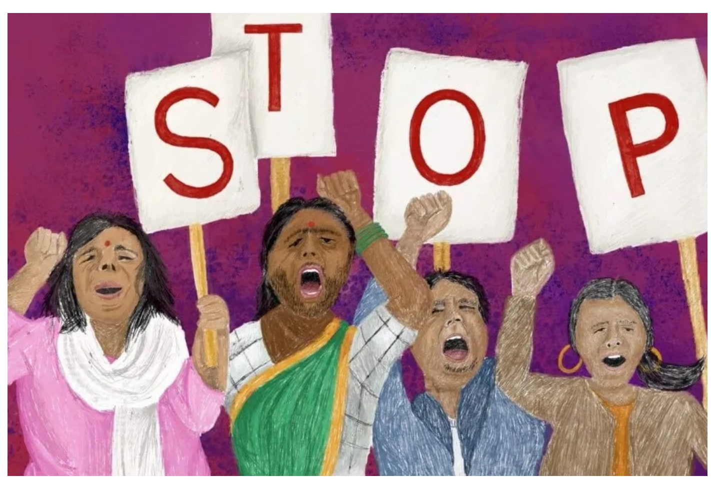

27

अनु प्रिया
(कलाकार/लेखिका)

सुपौल बिहार में जन्मीं अनु प्रिया जी के साठ से अधिक किताबों के आवरण एवं पत्र–पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके हैं। साहित्य अकादमी, राजकमल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, अल्टरनोट प्रकाशन, अगोर प्रकाशन, प्रकाशन विभाग आदि से किताबों के आवरण पर निरंतर इनके द्वारा बनाये गए चित्र का प्रकाशन होता रहता है।

थीम पेपर

महिलाओं पर डायन हिंसा: अपवाद नहीं व्यवस्था है यह?

संतोष शर्मा

निरंतर ट्रस्ट से जुड़ी हैं तथा पिछले तीन दशकों से ग्रामीण महिलाओं के मुद्दों पर काम कर रही हैं।

जब आस–पड़ोस के लोग, पंचायत, पुलिस और समुदाय महिला के डायन होने को लेकर कोई मतभेद नहीं रखते और उसके ऊपर की गई हिंसा को जायज ठहराते हैं तब डायन–हिंसा एक अपराध नहीं, बल्कि एक समाज द्वारा स्वीकृत हिंसा का रूप ले लेती है। गौरतलब है कि यह हिंसा मीडिया की सुर्खियों में तभी अपनी जगह बना पाती है जब हत्या जैसा जघन्य अपराध इन महिलाओं के खिलाफ समाज द्वारा किया जाता है। ऐसी घटनाएं अपवाद जैसे सनसनीखेज के रूप में परोसी जाती हैं और अगले ही दिन सब कुछ सामान्य सा दिखाई देने लगता है। इसका एक बहुत ही सटीक उदाहरण डायन के नाम पर महिलाओं के खिलाफ हिंसा के संदर्भ में देखा जा सकता है। हालांकि, महिलाओं और लड़कियों के खिलाफ हिंसा और लिंग–आधारित भेदभाव एक ग्लोबल समस्या है जिसका इतिहास सदियों पुराना है। महिलाओं पर हिंसा और उनकी दासता की शुरुआत कब और कैसे हुई, इसके ऊपर अलग अलग मत हैं जिन पर चर्चा करना इस लेख का उद्देश्य नहीं है। लेकिन, इस सच्चाई को यहाँ दर्ज करना जरूरी है कि महिलाओं पर हिंसा का यह रूप दुनिया में सबसे गंभीर एवं व्यापक मानवाधिकार उल्लंघनों में से एक है। यह किसी एक खास देश, धर्म या संस्कृति तक सीमित नहीं है बल्कि एक ऐसी ढाँचागत सामाजिक संरचना का परिणाम है जो सदियों से ब्राह्मणवादी पितृसत्ता, गैर बराबरी पर आधारित सत्ता–संबंधों, लैंगिक असमानता और स्त्री–विरोधी सोच के सहारे टिकी हुई है। दुनिया के हर कौने में मौजूद यह हिंसा अपने स्वरूप और तीव्रता में अलग हो सकती है लेकिन इसकी गैरमौजूदगी कहीं पर भी दिखाई नहीं देती। महिलाओं पर हिंसा को हम ज्यादातर मारपीट, हत्या, बलात्कार, अपहरण,

डायन का आरोप लगा कर महिला पर हिंसा करना तब एक व्ययस्था का हिस्सा बन जाती है जब लोग चुप रहते हैं। यह तब व्यवस्था का हिस्सा बन जाती है जब पंचायत कहती है– "हम क्या करें लोग ऐसे ही सोचते हैं और हमारे समाज में तो यही होता आया है", जब पुलिस तंत्र कहे–" कोई सबूत नहीं है किस गुनाह में अपराधी को पकड़ें। वैसे कुछ तो होगा जिसकी वजह से तुमको डायन कहा जा रहा है।" जाओ आपस में सुलह कर लो। माफी मांग लो। इसमें कानूनबाजी करना ठीक नहीं" और जब पूरा गाँव और समाज कहता है– "वो औरत ठीक नहीं है। उसने कई घर उजाड़े हैं। उसे सजा मिली तो गलत क्या है। ऐसी औरतों को जीने का हक नहीं है। मारो या गाँव से बाहर निकालो"।

एसिड अटैक, ऑनर किलिंग, मानव तस्करी जैसे अपराधों के रूप में ही देख पाते हैं लेकिन इसके ढांचागत होने के लक्षणों और परिणामों को देखें तो यह उन सब ढांचों– परिवार, शैक्षिणक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक एवं सांस्कृतिक– द्वारा पोषित और संरक्षित है। इन जघन्य अपराधों के मूल में हिंसा और जेंडेर भेदभाव के वो कृत्य हैं जिनकी गंभीरता को अक्सर नजरंदाज कर दिया जाता है। महिलाओं के साथ मानसिक और भावनात्मक उत्पीड़न, आर्थिक नियंत्रण, सामाजिक बहिष्कार, जबरन विवाह, भ्रूण हत्या, शिक्षा, अवसरों एवं पालन पोषण में भेदभाव और वे सभी कृत्य शामिल हैं जिनका उद्देश्य उन पर नियंत्रण रखना है।

महिलाओं पर जेंडर आधारित हिंसा की गंभीरता कुछ आँकड़ें बखूबी प्रदर्शित करते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनाइटेड नेशन्स द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार, दुनिया की लगभग हर तीसरी महिला अपने जीवन में कभी न कभी शारीरिक या यौन हिंसा की शिकार होती है। हर 10 मिनट में एक महिला की हत्या उनके ही साथी या परिजनों द्वारा कर दी जाती है। यह हिंसा अक्सर किशोरावस्था में ही शुरू हो जाती है जिसके गंभीर शारी. रिक, मानसिक व सामाजिक दुष्परिणाम होते हैं। महिलाओं को हिंसा का यह कुचक्र गर्भ से मृत्यु तक झेलना पड़ता है।

महिलाओं के खिलाफ हिंसा– जमीनी हकीकत को बयां करते आँकड़ें

हमारे देश में महिलाओं की स्थिति को लेकर एक अजीब विडंबना दिखाई देती है। एक ओर हम उनकी शिक्षा, तकनीकी एवं डिजिटल समावेशन, यूनिवर्सल वित्तीय समावेशन, स्वयं सहायता समूह गठन, और हर क्षेत्र में उनकी उपलब्धि के आँकड़े प्रस्तुत करते हैं तो दूसरी ओर, वही भारत महिलाओं के खिलाफ जेंडर–आधारित हिंसा के मामलों में वैश्विक स्तर पर एक चिंताजनक तस्वीर पेश करता है। राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वे राउंड –5 और राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो रिपोर्ट 2023 के आँकड़े यह साफ दिखाते हैं कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा एक ढांचागत हिंसा है जो वर्ष दर वर्ष कम होने के बजाय अपने पुराने रिकॉर्ड तोड़ती नजर आती है। घर या परिवार या शादी के रिश्तों में महिलाओं पर की जा रही हिंसा महिलाओं के खिलाफ सबसे अधिक रिपोर्ट किया जाने वाला अपराध है। परिवार और शादी जिसको हमारा समाज महिलाओं के लिए सबसे सुरक्षित और पवित्र रिश्ते जैसे परिभाषित करता है यह महिलाओं के शोषण और हिंसा को पोषित करने वाला और बाहरी हस्तक्षेप से सुरक्षित रखा गया है। यह कोई विडंबना नहीं है कि अधिकांश मामलों में हिंसा करने वाला कोई अजनबी नहीं, बल्कि पति, साथी या परिवार का सदस्य होता है। महिलाओं द्वारा निजी रिश्तों में और पारिवारिक संबंधों में बढ़ती हिंसा के बावजूद, घरेलू हिंसा को अब भी "निजी मामला" या "घरेलू विवाद" कहकर टाल दिया जाता है। यही वह बिंदु है जहाँ राज्य, कानून और समाज तीनों अपनी जिम्मेदारी से पीछे हट जाते हैं। हालांकि 2005 में घरेलू हिंसा को सिविल लॉ के दायरे में लाया गया जिसमें महिला को संरक्षण देने की बात की गई लेकिन अभी भी हमारा समाज ज्यादातर महिलाओं पर परिवार की चारदीवारी में होने वाली हिंसा को निजता के फ्रेमवर्क में देखता है। यह समझने के लिए कि महिलाओं पर हिंसा किस अबाध गति से बढ़ रही है जरूरी है कि हम एक नजर ताजा आंकड़ों पर डालें।

राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो द्वारा जारी वर्ष 2021–2023 (तीन वर्ष) के आँकड़े एक चिंताजनक तस्वीर पेश करते हैं। इन आंकड़ों के अनुसार हमारे देश में महिलाओं के खिलाफ अपराधों में वर्ष 2021 –2023 के बीच करीब 10.8% की बढ़ोत्तरी हुई है। जहां एक तरफ शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है वहीं दहेज हत्या जैसे जघन्य अपराधों में इजाफा भी देखा जा सकता है। वर्ष 2023 के आंकड़ों के अनुसार देश भर में 6516 दहेज हत्याएं दर्ज की गई। इन्हीं तीन वर्षों में पति–परिवार द्वारा क्रूरता से जुड़े मामलों में करीब 20: की वृद्धि दर्ज की गई है। अपहरण और तस्करी के मामलों में इन तीन सालों में 35.1% की वृद्धि दर्ज की गई जो बहुत ही भयावह तस्वीर पेश करते हैं। साथ ही बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ अभियान के बावजूद लिंग अनुपात (0–5 वर्ष) काफी चिंताजनक बना हुआ है। 2021 में 929, 2022 में 917 और 2023 में 927 दर्ज किया गया है। गौरतलब हो कि देश के कुछ जिलों में यह अनुपात 800 या उस से भी नीचे जा चुका है। यह इस बात को दर्शाता है कि कैसे भ्रूण हत्या और नवजात बालिका शिशु की अवहेलना अभी भी जेंडर आधारित हिंसा का एक सशक्त हथियार बना हुआ है जिसे सामाजिक मान्यता प्राप्त है।

बिहार राज्य भी महिलाओं के खिलाफ हिंसा में कोई आशाजनक तस्वीर पेश नहीं करता। अगर हम बिहार में महिलाओं के खिलाफ अपराधों की स्थिति का उपरोक्त संकेतकों के आधार पर विश्लेषण करें तो देखने को मिलता है कि राष्ट्रीय स्तर की तुलना में बिहार ज्यादातर संकेतकों पर बहुत खराब स्थिति में है। महिलाओं के खिलाफ कुल अपराधों में 2020 की तुलना में 33% से भी अधिक का इजाफा दर्ज किया गया है। वहीं दहेज हत्याओं, पति/परिवार द्वारा हिंसा, अपहरण एवं तस्करी जैसे अपराधों में गिरावट की जगह बढ़ोतरी ही देखने को मिलती है। लिंग अनुपात (0–5 वर्ष) 2020 में 964 के मुकाबले 2023 में 891 तक गिर चुका है जो काफी चिंता का विषय है। लड़कियों के खिलाफ हिंसा में भी बिहार बहुत ही चिंता. जनक तस्वीर पेश करता है। इस वर्ष (2025) जनवरी–अगस्त के बीच 5117 लड़कियां गायब हुई। कोविड के बाद इन आंकड़ों में काफी बढ़त दर्ज की गई है। यह आँकड़े दर्शाते हैं कि बिहार राज्य की महिलाओं और लड़कियों के खिलाफ हिंसा

में भागीदारी काफी चिंताजनक है। बिहार का महिला हिंसा का रिकार्ड देखें तो जिस विरोधाभास की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं वह बढ़िया से उजागर होती है।

बिहार देश का वह राज्य है जहां महिला सशक्तिकरण का एक विशालकाय ढांचा खड़ा किया है। करीब 1 करोड़ 40 लाख महिलाओ को 11 लाख समूहों में संगठित किया गया है। इन 11 लाख समूहों को 10 हजार करोड़ से अधिक शाख (बैंक क्रेडिट) से जोड़ा जा चुका है। औसतन प्रति महिला 7000–8000 रुपए का बैंक लोन न्यूनतम ब्याजदरों पर दिया गया है। महिला सशक्तिकरण के संस्थागत ढांचा का कोई और उदाहरण दुनिया में कहीं भी देखने को नहीं मिलता। लेकिन इसी बिहार राज्य में महिलाओं के खिलाफ हिंसा, दहेज, पति/परिवार द्वारा क्रूरता, तस्करी एवं अपहरण तथा लिंग अनुपात में चिंताजनक गिरावट महिला सशक्तिकरण की इस विडंबना को बखूबी उजागर करते हैं। इन दोनों ही आंकड़ों के विरोधाभासों से यह साफ दिखाई देता है कि इतने विशालकाय संगठन का हिस्सा बनाने के बाद भी पितृसत्तात्मक परिवार संरचना में महिलायें अपने हक में सौदेबाजी की ताकत नहीं बढ़ा पाई। यह विरोधाभास बताता है कि सशक्तिकरण को हम नारीवादी नजरिए से परिभाषित करें एवं विकास को तब तक अधूरा समझें जब तक आधी आबादी (महिलाएँ एवं लड़कियां) के लिए गरिमा से जीने का हक, हिंसा से सुरक्षा और निर्णय की आजादी सुनिश्चित नहीं की जाती।

डायन हिंसा भी एक ऐसी ही हिंसा है जिसका इतिहास करीब 5000 साल पुराना है लेकिन 1500–1700 सदी में महिलाओं पर यह हिंसा अपनी चरम सीमा में उभर कर सामने आई। चर्च और राज सत्ताओं ने मिल कर स्त्री देह और उनके ज्ञान को नियंत्रण करने के लिए इस हिंसा को हथियार बनाया। ऐसी महिलायें जो जड़ी बूटियों का ज्ञान रखती थी, जो दाईं थी, जो एकल और समाज के द्वारा तय किए गए नॉर्म्स से आजाद रहने की ख्वाहिश रखती थीं या किसी भी तरह से पुरुष, राज, चर्च की सत्ता को चुनौती दे सकती थीं इन महिलों को चिह्नित कर उनको मौत के घाट उतार दिया जाता था। डायन के आरोप में महिलाओं पर हिंसा इसी वैश्विक जेंडर आधारित हिंसा फ्रेमवर्क का सबसे जघन्य और अमानवीय रूप है जिसमें महिला को पीड़िता नहीं बल्कि समाज के लिए खतरा घोषित कर उन पर की जाने वाली हिंसा को अपराध नहीं बल्कि एक जरूरी सामाजिक दायित्व ठहराया जाता है। हमारे देश में मनुस्मृति और पौराणिक ग्रंथों में सीधे डायन शब्द का उल्लेख नहीं मिलता लेकिन महिलाओं को मायावी, दुष्ट, ईर्ष्यालु, खतरनाक और विश्वासघाती जैसी विशेषताओं से संबोधित किया गया है। मनुस्मृति के मध्यकालीन यूरोप से शुरू इस हिंसा के रूप प्राचीन एवं ब्रिटिश भारत में भी देखने को मिलते हैं। मनुस्मृति के श्लोक 2.213, 9.7 एवं 9.17 आदि श्लोकों में स्त्रियों को नैतिक रूप से अविश्वनीय, पुरुषों का पथभ्रष्ट करने वाली एवं सदैव पिता, पति या बेटे के द्वारा शासित इंसान के रूप में उल्लेखित किया गया है। वहीं पौराणिक ग्रंथों में भी ताड़का, सूर्पनखा, मो. हिनी आदि के उल्लेख हैं जो इन महिलाओं को अपनी यौनिकता जाहिर करने, पुरुष की सत्ता को चुनौती देने एवं जादुई सम्मोहन से छलने वाली महिलाओं के पात्र के रूप में प्रदर्शित कर उनको दंड का भागी बनाया गया। स्मृतियों और पौराणिक ग्रंथों में महिलाओं का ये चित्रण एक ऐसी वैचारिक जमीन तैयार करती है जो आगे चलकर जन मानस में उनके खिलाफ डायन लांछन जैसी हिंसा को वैध बनाती है।

लेकिन गौरतलब है कि जेंडर–आधारित हिंसा के तमाम रूपों के बीच डायन–हिंसा एक वह हिंसा है जो सबसे अधिक अमानवीय होते हुए भी उतनी

ही अधिक अदृश्य बनी रहती है। डायन–हिंसा अक्सर बीमारी, मृत्यु, फसल खराब होने या पारिवारिक कलह जैसे संकटों के लिए महिलाओं को दोषी ठहराकर शुरू होती है लेकिन अगर महिलाओं पर इस हिंसा का इतिहास पलट कर देखें तो साफ नजर आता है कि असल में यह हिंसा सत्ता, संपत्ति, जाति, यौनिकता और नियंत्रण के सवालों से सीधी जुड़ी है। बिहार में हाल ही में महिलाओं पर डायन हिंसा के मामलों में आई तेजी के कारणों, इसकी मौजूदगी और समाज में उसकी स्वीकृति को समझने के उद्देश्य से निरंतर ट्रस्ट द्वारा किए गए सर्वे के खुलासे बहुत कुछ चौंकाने वाले भी थे और साथ ही डायन के आरोप में प्रताड़ित उन अनगिनत महिलाओं, जिनकी दर्दनाक कहानियाँ समाज बहुत जल्द भुला देता है, पर हुई अकल्पनिक हिंसा को जन मानस के पटल रखने का काम भी करती है।

मिथकों के परे : क्या कहते हैं सर्वे के आँकड़े?

पिछले 2 वर्षों में गया, रोहतास, नवादा, दरभंगा, पूर्णिया, मुजफ्फरपुर, जमुई, पटना और कई अन्य जिलों में कई महिलाओं पर डायन होने का आरोप लगा कर उनकी निर्मम हत्या कर दी गई। इसके अलावा अनगिनत घटनाएं सामने आई जिनमें महिलाओं पर जानलेवा हमला, उनकी गरिमा के साथ खिलवाड़, सामाजिक अपमान एवं बहिष्कार, गाँव–निकाला, आर्थिक दंड एवं जुर्माना, ओझा द्वारा झाड़फूँक एवं सार्वजनिक यातना, मजदूरी मिलना बंद होना आदि शामिल हैं। टाइम्स ऑफ इंडिया, पटना एडीशन के अगस्त माह में प्रकाशित एक लेख के अनुसार बिहार में इस वर्ष जनवरी– मई के बीच में डायन प्रथा से संबंधित हिंसा के 197 मामले दर्ज किए गए। यह संख्या वर्ष 2024 में 621, और 2023 में 629 थी। 2020 में कोविड के दौरान इन मामलों में काफी बढ़त देखने को मिली, कुल 897 मामले दर्ज किए गए। हालांकि सामाजिक कार्यकर्ताओं, महिला संगठनों एवं जमीनी स्तर पर काम करने वाले सामाजिक कार्यकर्ताओं के अनुसार दर्ज किए गए मामलों की संख्या वास्तविक मामलों से बहुत कम है। इस हिंसा से पीड़ित महिलायें सामाजिक दबाव और डर के कारण रिपोर्ट करने से डरती हैं या उनको डराया धमकाया जाता है। अल्प रिपोर्टिंग का एक कारण यह भी हो सकता है कि मारपीट और गरिमा– हनन से जुड़े अपराधों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं में दर्ज करवाया गया हो क्योंकि उन धाराओ में सजा के सख्त प्रावधान होने के साथ साथ महिलाओं के लिए मुवावजे के भी प्रावधान हैं।

वर्ष 2023 में निरंतर ट्रस्ट द्वारा राज्य के 10 जिलों के 118 गांवों में डायन

चित्र : thethirdeyehindi.in

कुप्रथा पर किए गए सर्वे के अनुसार, बिहार में हर दो गाँव पर औसतन तीन महिलाएँ डायन–आरोप का दंश झेल रही हैं। हम इसी आँकड़े के आधार पर अनुमान–विस्तार (बहिर्वेशन) करते हुए कह सकते हैं कि बिहार के कुल 44000 राजस्व गांवों में करीब करीब 60000–70000 महिलायें डायन होने के आरोप का दंश झेल रही हैं। यह संख्या इससे भी कहीं ज्यादा होने का अनुमान है क्योंकि सर्वे में केवल उन महिलाओं को शामिल किया गया जो स्वेच्छा से अपनी आपबीती बताने के लिए आगे आई। महिलाओं की एक बहुत बड़ी संख्या ऐसी भी थी जिन्होंने आपबीती को सार्वजनिक रूप से उजागर नहीं करना चाहा क्योंकि उन्हें अंदेशा था कि उनके डायन होने की अफवाह और अधिक लोगों तक पहुँच कर उन पर हिंसा को बढ़ावा दे सकती है। यही कारण है कि सर्वे का नमूना सीमित और केवल सतही हैं।

अगर इस डायन कुप्रथा से जुड़े हर तार की गहराई से पड़ताल की जाए तो असंख्य महिलायें सामने आयेंगी जो डर, सामाजिक बहिष्कार और जान के खतरे के कारण अपने साथ हो रही हिंसा को जिंदगी भर सहन करने के लिए मजबूर हैं। बहरहाल, सीमित और सतही ही सही, निरंतर द्वारा किए गए इस सर्वे ने डायन हिंसा की सामाजिक संरचना को बहुत ही मजबूती से और ठोस साक्ष्यों के साथ सामने रखा है। साथ ही बहुत सारे मिथकों को भी उजागर किया है जो इन मुद्दों पर काम करने वाली संस्थाओं और संगठनों के लिए एक नया दृष्टिकोण पेश करती है।

जिन मिथकों को इस सर्वे ने तोड़ा उनमें से कुछ खास को देखने की कोशिश करते हैं। सबसे पहला यह कि शादी महिलाओं को एक हद तक सुरक्षा और सामाजिक मान्यता देती है लेकिन इस सर्वे में देखा गया कि 75% महिलायें जिन्होंने सर्वे में हिस्सा लिया वो शादीशुदा थीं और अपने पति और बच्चों के साथ परिवार में रहती थीं। शादी उनके लिए डायन हिंसा से बचाव का कोई रक्षा कवच नहीं बन पाई। दूसरे, पीड़िता और लांछन लगाने वाले या हिंसा को अंजाम देने वाले ज्यादातर एक ही जाति, वर्ग और धर्म से संबंध रखने वाले होथे। बहुत से मामलों में जाति, और वर्ग की सत्ता की भूमिका देखने में नहीं आई। लेकिन, जाति पहचान महिलाओं के लिए डायन हिंसा से बचाव का रक्षा कवच जरूर बनती देखी गई। 148 पीड़िताओं में से केवल एक महिला सामान्य जाति से थी जिसको उसी के घर वालों ने डायन कह कर बदनाम किया लेकिन यह भी बात सामने आई कि उन्हीं के जाति के किसी पंच–प्रमुख ने घटना को वहीं दबा दिया। उनके शब्दों को सर्वे में शामिल एक महिला ने बखूबी उद्धृत किया, "यह सब लफड़े छोटी जात में होते हैं हमारे यहाँ ऐसा नहीं होता"। सर्वे के दौरान शिवहर से प्रेमशिला ने इसी को कुछ अलग तरीके से रखा "दीदी किसकी हिम्मत है ऊंची जात की महिला को डायन कहने का। उनके यहाँ तो सब कुछ अंदर अंदर ही सुलझा लेते हैं। हम छोट जात की औरतों की इज्जत ही तो समाज में उछाली जाती है"। सर्वे में 97% महिलायें दलित और पिछड़ा वर्गों से थी। इन खुलासों से यह स्पष्ट होता है कि डायन हिंसा केवल जेंडर आधारित नहीं बल्कि जेंडर और जाति के अन्तरसंबंध (Intersectionality) से उपजी हिंसा है।

सर्वे के आंकड़ों से भी यह साबित होता है कि उम्र भी महिला पर डायन हिंसा के लिए एक रास्ता खोलती है। सर्वे में भाग लेने वाली 148 महिलों में से 75% महिलायें 46 वर्ष से अधिक उम्र की थी। यह देखा गया कि डायन हिंसा युवा महिलाओं के बजाय वृद्ध, दूसरों पर निर्भर और सामाजिक रूप से कमजोर औरतों को अपना शिकार बनाती है। इसी के साथ एक और महत्वपूर्ण तथ्य सामने आया और वो यह कि कैसे अशिक्षित एवं संसाधनविहीन महिलायें इस हिंसा के लिए एक आसान टारगेट बन जाती हैं। सर्वे में भाग लेने वाली महिलाओं में से 73% महिलायें कभी स्कूल नहीं गई और 20% महिलायें केवल प्राथमिक कक्षा तक ही अपनी पढ़ाई पूरी कर पाई थी। 66% महिलायें किसी तरह के रोजगार में नहीं थी और शेष कृषि मजदूर थीं लेकिन डायन आरोप के बाद अधिकांश महिलाओं को मजदूरी मिलना बंद हो चुकी थी।

सर्वे के इन आंकड़ों से यह साफ उजागर होता है कि शिक्षा और संसाधनों की कमी महिलाओं को सामाजिक हिंसा के लिए कहीं अधिक असुरक्षित बनाती है। सर्वे से उजागर कुछ निष्कर्ष हमारे सामने इस हिंसा की चपेट में आने वाली महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और जनानकी संबंधी पहचान खोल कर रखती हैं। ये पूरानी अवधारणाओं का खंडन करती हैं कि ज्यादातर केवल एकल, निःसंतान, विधवा महिलायें ही इस हिंसा का शिकार होती हैं। यह मिथक इस सर्वे से टूटा है। इन तथ्यों के सामने आने से डायन हिंसा के मुद्दे पर काम करने वाले संगठनों को अपनी रणनीतियों को बनाने में काफी मदद मिलेगी। कौन इस हिंसा की संभावित शिक. ार हैं यह जानकारी भी जरूरी है जिससे उनकी सुरक्षा के लिए कारगर रणनीतियाँ बनाई जा सकें। साथ ही उम्र और शादी को औरत की सामाजिक गरिमा से जोड़ कर देखने की कवायद को भी एक चुनौती दी जा सकेगी। क्या सच में शादी महिलाओं को सामाजिक हिंसा से सुरक्षा देती है? क्या उम्र महिलाओं के लिए सामाजिक गरिमा का पायदान बन पाती है? अगर हाँ तो कौन हैं ये महिलायें जो शादीशुदा होने और उम्र के एक खास पड़ाव पर पहुँचने के बाद भी इस तरह की अमानवीय हिंसा का शिकार हैं।

एक बहुत ही महत्वपूर्ण खुलासा इस सर्वे के निष्कर्षों से हुआ वो यह कि कैसे संस्थागत चुप्पी और सामाजिक स्वीकृति पीड़िता के लिए एक न खत्म होने वाली हिंसा को जन्म देती है। सर्वे के निष्कर्ष बताते हैं कि डायन–हिंसा के मामलों में पीड़िताओं की चुप्पी एक आम पैटर्न है। यह चुप्पी समाज द्वारा बड़े पैमाने पर इस हिंसा की स्वीकृति, संस्थागत

हस्तक्षेपों की उदासीनता और उनमें बैठे पितृसत्तात्मक सोच और महिला हिंसा को जायज ठहराने वाली मानसिकता से ओतप्रा.`त अधिकारियों का ही एक प्रतिबिंब है। सर्वे में भाग लेने वाली पीड़ित महिलाओं में से केवल 31% ने ही पचायतों या पुलिस में शिकायत की। इनमें से से 69% पीड़िताओं ने बदनामी, हिंसा के ज्यादा बढ़ने के भय से और इन संस्थानों पर भरोसा ना होने के कारणों की वजह से शिकायत नहीं करने का फैसला लिया। इसमें जो सबसे चिंता.जनक बात सामने आई वो यह थी कि जिन 31% महिलाओं ने शिकायत करने की हिम्मत की उनमें 62% की शिकायतों पर कोई सुनवाई नहीं हुई। जिन 38% शिकायतों पर कार्यवाही हुई उनमें से केवल 10% पीड़िताओं को न्याय मिलने का एहसास हुआ। डायन– हिंसा से पीड़ित महिलाओं और अन्य हिंसा जैसे घरेलू हिंसा, यौन हिंसा आदि में पीड़िताओं का न्याय व्यवस्था में विश्वास और रिपोर्टिंग–व्यवहार में समानता देखी जा सकती है। लेकिन, एक बहुत ही महत्वपूर्ण खुलासा सर्वे में शामिल महिलाओं ने किया वो यह था कि घरेलू हिंसा, यौन हिंसा जैसे अपराधों में पीड़िता के साथ कुछ लोगों या समाज की संवेदना देखने को मिलती है लेकिन डायन के आरोप में कोई उनके साथ खड़ा दिखाई नहीं देता।

शिवहर जिले के तरियानी में रहने वाली नीलम की आप बीती कुछ इस तरह से बयान होते सुनी गई, "मुझे लगता है कि मेरे ऊपर डायन होने का कलंक कभी खत्म नहीं होगा। मेरे अपने घर वाले भी अब तो मुझे शक की निगाह से देखते हैं। मेरी बहू अपने बेटे की मृत्यु के बाद मेरे बेटे (अपने पति) को लेकर दिल्ली चली गई। बोलती थी यही मेरे बेटे को खा गई। सारा गाँव मुझे ही दोष देता है कहीं कुछ भी खराब होने से। बच्चे तक मुझ से डर कर दूर भाग जाते हैं।''

यह गौरतलब है कि डायन–हिंसा की प्रकृति को अगर बारीकी से देखें तो समझ में आता है कि यह हिंसा घरेलू हिंसा और यौन हिंसा से एक और मायने में भी अलग है। हमने देखा की अकेले बिहार राज में पिछले 2 वर्षों में करीब 16 दर्ज की गई हैं। डायन हिंसा की पीड़िताओं को गाँव –समाज ने मौत के घाट उतार दिया था जैसा कि हमने गया, पूर्णिया, रोहतास, नवादा आदि जिलों के संदर्भ में देखा।

लेकिन यह भी देखने की बात है कि डायन हिंसा एक ऐसी हिंसा है जो घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं रहती। वह अचानक रोष में आकर पत्नी या बेटी पर शारीरिक हिंसा या किसी भी महिला को अकेले में पाकर यौन हिंसा करने जैसी नहीं है। यह वो हिंसा है जो एक लंबे समय तक महिला के सामाजिक, आर्थिक, मानसिक और भावनात्मक और शारीरिक उत्पीड़न का परिणाम है। पंचायतों और न्यायिक संस्थानों के लिए इस हिंसा को रोकने के लिए कारगर कदम उठाना काफी हद तक संभव है। लेकिन सवाल यह है कि क्या हमारी पंचायतें इसके लिए तैयार हैं? क्या हमारी सरकारें इस हिंसा को एक गंभीर मुद्दा मानती हैं? क्या हमारी न्यायिक संस्थानों में जरूरी संवेदनशीलता है जो कुत्सित और नकारात्मक मर्दानगी को दफना कर महिलाओं की इन संस्थानों में आस्था जगाने का काम शुरू करें?

सबसे पहले यहाँ पंचायतों की भूमिका पर बात करना जरूरी है। यह काफी आश्चर्यजनक था कि सर्वे के दौरान जिन 81 पंचायतों के मुखियों/सरपंचों ने भाग लिया उनमें से 69 को बिहार डायन प्रथा निषेध अधिनियम 1999 की कोई जानकारी नहीं थी। जिन 12 मुखियों और सरपंचों को इसके बारे में कुछ जानकारी थी उनमें से केवल 3 ने इस विधेयक के बारे में ग्रामसभा या पंचायत बैठकों में चर्चा की थी। पंचायत की भूमिका पर बात होना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि डायन हिंसा में हत्या के मामलों में इनकी भूमिका काफी नकारात्मक देखी गई है। गया जिले की डुमरिया प्रखण्ड के पंचमा गाँव में एक 40 वर्षीय दलित महिला की एक 30–35 लोगों की भीड़ द्वारा उसी के घर में जला कर हत्या के मामले में ओझा बुलाने, ओझा के लिए पंचायत भवन में झाड़फूँक करने की व्यवस्था करने एवं महिला और बाकी गाँव वालों को सार्वजनिक न्यौता देने का काम पंचायत द्वारा किया गया। वहीं पर रोहतास जिले के नाहट्टा प्रखण्ड और पूर्णिया के टेगमेगा गाँव की पंचायतों की भूमिका शक के घेरे में आती है। पंचाय वो संस्थान है जिस तक पीड़िताओं की पहुँच आसान होती है। निरंतर द्वारा एक अन्य सर्वे में निकाल आया है कि घरेलू हिंसा की शिकार 182 महिलाओं में से 90% ने पंचायतों से मदद लेने की कोशिश की। लेकिन डायन –हिंसा के मामलों में यह साफ निकल कर आया कि लोक सत्ता कि इन संरचाओं और ढांचों में बिहार का डायन प्रथा निषेध अधिनियम पूर्णतः गायब है।

हम महिला संगठनों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और पैरोकारों और जनवादी मूल्यों में आस्था रखने वाले नागरिकों के लिए यह एक चिंता का विषय होना चाहिए कि आजाद देश की औरतें कैसे गरिमा से जीवन जीने के मौलिक अधिकार से वंचित की जा रही हैं। डायन प्रथा में विश्वास जहां एक तरफ महिलाओं के प्रति समाज की विपक्षिप्त मानसिकता को दर्शाता है वहीं इसको रोकने में विफलता हमारे राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्रों में पितृसतात्मक सोच और महिला विरोधी मानसिकता को दिखाता है।

झारखंड

डायन के नाम पर मारी गई हजारों औरतें

इन घटनाओं को सुनकर मन में यह संदेह अवश्य होता है कि क्या सच में ऐसे कोई भी किसी मनुष्य को डायन बताकर कानून को भी ताक में रखते हुए किसी की जान ले सकता है या फिर सच में डायन जैसा कोई ऐसा रहस्य है जिससे हम आज भी डरते हैं और व्यथित होकर उसे खत्म कर देने को आमादा हो जाते हैं। हमारा मन तथ्यों से ज्यादा साक्ष्य पर भरोसा करता है, ऐसे में अगर कोई इंसान आपको ऐसी कोई कहानी या घटना सुना देता है तब हमारा मन उसकी बातों को तुरंत स्वीकार कर लेता है कि सच में ऐसी कोई अलौकिक शक्ति हमारे आसपास मौजूद है। शायद यही वजह है कि समाज में डायन–बिसाही जैसी अवधारणा लोगों के मन में घर की हुई है और इसी अंधविश्वास को मानते हुए यह समाज न जाने कितनी ही महिलाओं की मौत की वजह बन गया है। ये तीनों घटनाएं तो सिर्फ एक प्रदेश की हैं, ऐसी अनगिनत घटनाएं हैं जिनका पुलिस अथवा प्रशासन के रिकॉर्ड में नाम तक अंकित नहीं है। ऐसी अनगिनत घटनाओं में न जाने कितनी घटनाएं दर्ज नहीं हो पाती हैं और कितनी ही वारदातों को दबा दिया जाता है।

ऐसी घटनाओं को सुनकर सबसे बड़ा सवाल हमारे मन में ये आना चाहिए कि क्या सच में हम डायन बिसाही की अवधारणा को मान सकते हैं या फिर ऐसे किसी भी व्यक्ति के पास ऐसी कोई तांत्रिक शक्ति का प्रसार हो

–2015 में झारखंड राज्य के मांडर जिले में पांच महिलाओं को उनके घरों से जबरदस्ती बाहर निकाल कर डंडे और लोहे की छड़ से उनकी पिटाई कर उनकी निर्मम हत्या कर दी जाती है। गाँव वालों का आरोप था कि "ये महिलाएँ काला जादू करती थीं"।

–20 सितम्बर 2018 में झारखंड राज्य के ही बुंडू जिला में बुधनी देवी के डायन होने के शक में उसी के भतीजे ने कुल्हाड़ी से मार कर उसकी हत्या कर दी।

–12 नवम्बर 2018 में झारखंड राज्य के चाईबासा जिले के चक्रधरपुर प्रखंड के कुरलिया गाँव के रणजीत प्रधान ने अपनी ही सास को डायन बताकर धारदार हथियार से मार डाला।

सकता है जिससे कि वो किसी अन्य मनुष्य को हानि अथवा नुकसान पहुंचा सकता है? विज्ञान की बात मानें तो ये सब अंधविश्वास है और पौराणिक गाथाओं की मानें तो ये सब सच के काफी निकट लगता है।

आखिर क्या है ये डायनों का रहस्य?

झारखंड में जादू टोना, अंधविश्वास और डायन बिसाही बताकर हत्या और प्रताड़ना के मामले काफी पहले से हैं। झारखंड में 1800 महिलाओं की इसी सन्दर्भ में निर्मम हत्या की जा चुकी है। डायन बिसाही के नाम पर हत्याओं के मामलों में झारखंड के अलग–अलग जिले जैसे रांची, खूंटी, सरायकेला, गुमला, देवघर, लोहरदगा और लाते. हार शामिल हैं जहाँ इस कुकृति के साक्ष्य निशान देखने को मिले हैं। जादू टोना या डायन बिसाही की बातें शहरों की अपेक्षा गाँव घरों में अधिक देखने को मिलती है। यहाँ लोगों में अंधविश्वास इस तरह हावी हो जाता है कि वो इन सब बातों को आँख बंद करके विश्वास कर लेते हैं। किसी को रोग हो गया और उसका सही उपचार न करने से उसकी मृत्यु हो गयी तब उसकी मृत्यु का जिम्मेदार भी डायन को मान लिया जाता है। घरेलू उपचार के साथ ओझा गुनी की मान्यता गाँव घर में ज्यादा मिलती है। वे समझते हैं कि ओझा के पास जाकर किसी भी असाध्य रोग से भी मुक्ति मिल सकती है। डायन के नाम पर औरतों के साथ जुल्म करने वाले लोग ओझा गुनी की बातों पर भरोसा करके उसका शोषण करते हैं। यहाँ तक कि महिलाओं को डायन बताकर मल–मूत्र पिलाया जाता है, निर्वस्त्र कर सामूहिक दुष्कर्म किया जाता है और सर मुड़वा कर मुंह काला कर गाँव घर में घुमाया जाता है। इस वीभत्स चित्र को देख कर किसी की भी रूह काँप उठती है। ऐसी खबरों को सोचकर ही मन में निःस्तब्धता आ जाती है। किसी के कहने से अगर किसी की मृत्यु हो जाती है तब उसे हम अंधविश्वास नहीं कहेंगे तो और क्या कहेंगे? महिलाओं को डायन बताकर नृशंस हत्या करना अमानवीय संवेदना का परिचायक है। इस कुकृति को कोई भी समाज या इंसान कैसे मान सकता है? ना ही कोई इस पर आवाज उठाता है और न ही इसपर कोई सुनने समझने को तैयार होता है। आम तौर पर गांवों में ये अवधारणा है कि डायन तंत्र–मंत्र से किसी की भी जान ले सकती है। उनके पास इतनी शक्ति होती है कि हरे–भरे पेड़ को सुखा दे या फिर बच्चे या जीव को गायब या बीमार कर दे। गाँव के ही कुछ ऐसे ओझा गुनी व्यक्ति खुद की पैठ बनाने के लिए विधवा या कमजोर महिलाओं को डायन घोषित कर उन्हें शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना देकर अंततः उनकी जान ले लेते हैं।

डायन बताकर होने वाली हत्याओं की रोकथाम के लिए झारखण्ड में अलग से कोई कानून नहीं था। संयुक्त बिहार के डायन प्रथा प्रतिषेध अधिनियम 1999 ही झारखण्ड में लागू है जिसे राज्य सरकार ने 3 जुलाई 2001 में अंगीकृत किया था। इस अधिनियम के बनने के बावजूद समाज में इस प्रथा का उन्मूलन नहीं हो सका है, अपितु हम यह कह सकते हैं कि लोग और समाज में इस कुरीति का अंत होना फिलहाल संभव नहीं दिखता है। अगर हम मूल वजहों पर जाए तब हमें यह पता चलेगा कि इसकी मुख्य वजह शिक्षण और जागरूकता की कमी एवं स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है। गाँव घरों में शिक्षा की स्थिति दयनीय है जिसकी वजह से आम लोगों में इस प्रथा के प्रति जागरूकता शून्य के करीब है। लोग स्वास्थ्य सुविधा अच्छी नहीं होने पर तथा किसी अनजाने से रोग होने पर भी उसका कारण काले जादू और डायन–बिसाही को मान लेते हैं।

(साभार :monomousumi.com)

आपबीती

छुटनी महतो : पहले डायन प्रथा की शिकार हुई, फिर मिला पद्मश्री

भारत सरकार ने झारखंड की सामाजिक कार्यकर्ता छुटनी देवी को साल 2021 में पद्मश्री पुरस्कार देने की घोषणा की। सरायकेला खरसावां जिले की रहनेवाली छुटनी देवी को कभी डायन बताकर मैला पिलाया गया था और घर से निकाल दिया गया था। ये वो वक्त था, जब उनके पति ने भी उनका साथ नहीं दिया। इस घटना के बाद से वे खुद डायन विरोधी अभियान की कार्यकर्ता बन गईं। साल 2016 में छुटनी देवी ने बीबीसी को अपनी कहानी बताई थी। पढ़िए उनकी कहानी उन्हीं की जुबानी–

"मैं छुटनी महतो हूँ। लोग मुझे डायन कहते हैं। निवासी गाँव– बीरबांस, थाना– गम्हरिया, जिला– सरायकेला खरसांवा। राज्य– झारखंड। यही मेरा छोटा सा बायोडेटा है। गम्हरिया थाने के महतांड डीह गाँव में मेरी शादी हुई थी, लेकिन, मुझे वहाँ से निकाल दिया गया। मेरी उम्र जब 12 साल थी, तो धनंजय महतो से मेरी शादी कर दी गई। जल्द ही हमारे तीन बच्चे हो गए।

दो सितंबर 1995 को मेरे पड़ोसी भोजहरी की बेटी बीमार हुई। लोगों ने शक जताया कि मैंने उस पर टोना कर दिया है। गाँव में पंचायत हुई। इसमें मुझे डायन करार दिया गया। लोगों ने घर में घुसकर मेरे साथ बलात्कार की कोशिश की। वे लोग दरवाजा तोड़कर अंदर आए थे। हम किसी तरह बचे। सुंदर होना मेरे लिए अभिशाप बन गया। अगले दिन फिर पंचायत हुई। पाँच सितंबर तक रोज कुछ न कुछ होता रहा। पंचायत ने 500 रुपए का जुर्माना लगाया। वह अदा कर दिए। इसके बाद लगा कि सबकुछ ठीक हो जाएगा, लेकिन हुआ नहीं। शाम हो चली थी। गाँव वालों ने ओझा को बुलाया। वे दो लोग थे। उन लोगों ने

आज लोग मुझे सम्मानित करते हैं, सेमिनारों में बुलाते हैं लेकिन उस समय कोई भी मेरे लिए खड़ा नहीं हुआ।

मुझे मैला पिलाने का सुझाव दिया। बोले कि मानव मल पीने से डायन उतर जाती है। मैंने मना किया। फिर क्या था। मैं अकेली और पूरा गाँव दूसरी तरफ। लोगों ने मैला पिलाने के लिए मुझे पकड़ लिया। उनकी पकड़ से छूटने की कोशिश की तो मैला मेरे शरीर पर गिर गया। लोगों ने फिर पकड़ा। मैला दोबारा फेंका गया। अब उसका कुछ हिस्सा मेरे मुँह के अंदर था। मैं डायन करार दी जा चुकी थी। मुझे घर में घुसने नहीं दिया गया। चार बच्चों के साथ रात पेड़ के नीचे काटी। पति क्या करता। उन्हें गाँव में ही रहना था। रात में हम विधायक चंपई सोरेन के यहाँ गए। वहाँ से हमें कोई मदद नहीं मिली। छह सितंबर को मैंने थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई। कुछ लोग गिरफ्तार हुए। फिर जमानत पर छूट गए। इसके बाद गाँव में कुछ नहीं बदला। लेकिन मेरी किस्मत बदल गई। मैं अपना ससुराल छोड़ मायके आ गई। यहाँ भी लोग देखकर दरवाजा बंद कर लेते कि मैं डायन हूँ। उनके बच्चों को कुछ कर दूँगी। ऐसे में मेरे भाइयों ने साथ दिया। मेरे पति भी आए। कुछ पैसे की मदद की। भाइयों ने जमीन दी, पैसे दिए। अब मायका ही मेरा गाँव हो गया।

मुझे सामान्य होने में 5 साल लगे। अब तो एक ही मकसद है, डायन करार दी गई महिलाओं के लिए काम करना। यही कर रही हूँ। इसके लिए मुख्यमंत्री ने मुझे सम्मानित किया है। लेकिन, 1995 में मेरे लिए कोई खड़ा नहीं हुआ। लोग मुझसे जलते थे कि क्योंकि मैं अच्छे कपड़े पहनती थी। मेरे साथ सोना चाहते थे क्योंकि, मैं सुंदर थी।''

बीबीसी को अपनी कहानी बताते हुए छुटनी महतो कई बार रोईं। जब उन्हें डायन करार दिया गया था, उस समय वो करीब 30 साल की थीं, लेकिन अब वो बूढ़ी हो चली हैं। उन्हें सेमिनारों मे बुलाया जाता है। हवाई जहाज से आना–जाना भी हुआ है। छुटनी कहती हैं, डायन सिर्फ एक वहम के सिवा कुछ नहीं है।

एसोसिएशन फार सोशल एंड ह्यूमन अवेयरनेस (आशा) के अजय कुमार जायसवाल बताते हैं झारखंड में सिर्फ 2016 में 18 महिलाओं की हत्या डायन होने के आरोप में कर दी गई थी। झारखंड में पिछले 20 साल में करीब 16 सौ महिलाएँ डायन के नाम पर मारी जा चुकी हैं। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के 2014 के आँकड़े के मुताबिक, झारखंड में 2012 से 2014 के बीच 127 महिलाओं की हत्या डायन बताकर की गई।

(साभार : www.bbc.com/hindi)

बेरहमी

तांत्रिक के कहने पर 5 को जला डाला

जुलाई 2025 में पूर्णिया के एक गांव में 5 लोगों की सामूहिक हत्या की खबर ने पूरे देश को झकझोर दिया। बताया गया कि ये हत्याएं परिवार की एक महिला के डायन होने के शक में की गई थीं। मुफस्सिल थाना के टेटगमा में डायन कहकर एक ही परिवार के पांच लोगों की हत्या कर दी गई थी। थोड़े दिनों के बाद इससे जुड़ा एक वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल हुआ जिसमें एक तांत्रिक एक बीमार लड़के को ठीक करने के लिए झाड़–फूंक करता हुआ दिखाई देता है और उसे ही इस हत्याकांड के लिए उकसाने का मुख्य आरोपी बताया जाता है। वीडियो में दिख रहे शख्स का नाम नकुल उरांव बताया जाता है। वीडियो में तांत्रिक नकुल उड़ाव रामदेव उरांव के बीमार बेटे को ठीक करने के लिए झाड़ फूक कर रहा है। मंत्र फूंकते हुए वह बड़बड़ा भी रहा है।

बताया गया कि रामदेव उरांव के एक बेटा की कुछ दिन पहले मौत हो गयी थी। उनका दूसरा बेटा बीमार पड़ा था। इस दौरान मुख्य आरोपी नकुल उरांव ने झाड़ फूंक किया था। वीडियो में दिख रहे झाड़ फूंक करने वाले शख्श ने यह अफवाह फैलाई थी कि बाबूलाल उड़ाव की पत्नी सीता देवी और मां कातो देवी ने ही इस लड़के पर डायन बिसाही की है। इसके बाद समाज में एक बैठक भी बुलाई गई थी। उस दिन बाबूलाल उड़ाव को भी बुलाया गया था। लेकिन वह नहीं पहुंचा था। 6 जुलाई की रात तांत्रिक नकुल उरांव ने ही गांव के लोगों को उकसाया। रामदेव उरांव के बीमार बेटे को गांव के लोग बाबूलाल उरांव के घर पर लेकर गए और बाबूलाल की मां को इसे ठीक करने के लिए कहा। बाबूलाल की पत्नी सीता देवी अपने मायके में थी। वहां से जबरन लोगों ने उसे बुलवाया।

जब वे लोग बीमार लड़के को ठीक नहीं कर पाए तो करीब डेढ़ सौ लोगों की उग्र भीड़ बाबूलाल उरांव, उनकी पत्नी सीता देवी, मां कातो देवी, बेटा मनजीत उरांव और बहू रानी देवी को लाठी–डंडे से बेरहमी से पीटने लगी। जब उसका भाई बचाने गया तो उन्हें भी धमकी दिया कि अगर पुलिस को कॉल करोगे तो तुम्हें भी काट देंगे। डर से वे लोग सहम गए। इसके बाद उग्र भीड़ ने पांचों को जिंदा जला दिया और शव को ट्रैक्टर पर लाद कर घटनास्थल से 4 किलोमीटर दूर नदी किनारे जलकुंभी में फेंक दिया। वहीं ट्रैक्टर मालिक सनाउल्लाह ने 5 शव को ले जाने के लिए इन लोगों से 40,000 रुपये लिए। हालांकि पुलिस ने ट्रैक्टर मालिक सनाउल्लाह, तांत्रिक नकुल उरांव समेत तीन लोगों को गिरफ्तार कर लिया। इस मामले में 23 नामजद और करीब 150 अज्ञात के खिलाफ प्राथमिक दर्ज की गई।

राजस्थान

पति के जूतों में पानी पिलवाते हैं

राजस्थान में अंधविश्वास के नाम पर स्त्रियों के साथ शर्मनाक करतूत

विडंबना है कि आजादी के सात दशक बाद भी हमारा समाज अंधविश्वास के गर्त से बाहर नहीं निकल पाया है। कहने को तो हमारे देश की साक्षरता 74 प्रतिशत है लेकिन इसके विपरीत आए दिन अंधविश्वास के नाम पर घटित होने वाली प्रताड़ना व मारपीट की घटनाएं हमारे देश के खोखले विकास की पोल खोलकर रख देती हैं। एक ओर इसरो के सफल प्रक्षेपण की खबरें हमें खुश कर रही हैं तो वहीं दूसरी ओर अंधश्रद्धा की खबरें हमारी खुशी को गम में तब्दील कर रही है। ये अजीब कशमकश है जिसमें हमारा समाज और देश पिसता जा रहा है।

सोचने की बात यह भी है कि समय के साथ विज्ञान के विकास के बाद जिस आडंबर और अंधविश्वास का अंत होना चाहिए था, वो अब तक नहीं हो सका है। दुःख इस बात का है कि आधुनिक व शिक्षित पीढ़ी भी इस मार्ग का अंधानुकरण करती जा रही है। काला जादू, भूत–प्रेत, मानव व पशु बलि, डायन प्रथा, बाल विवाह से लेकर कांच के टूटने, बिल्ली के रास्ते काटने, पीछे से टोकने व कई गणितीय अंकों को भी अंधविश्वास के नजरिये से परखा और जांचा जा रहा है। दिन व कपड़ों में भी आपको अंधविश्वास का असर देखने को मिल जाएगा।

यह बताते हुए मन आक्रोश से भर उठता है कि आज भी राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में बंकाया देवी के मंदिर में अंधविश्वास के नाम पर महिलाओं के साथ शर्मसार करने वाले काम हो रहे हैं। यहां भूत–प्रेत भगाने के लिए महिलाओं को पति के जूतों को सिर पर उठाने व उनमें पानी पीने जैसे कृत्य करवाकर उन्हें लज्जित किया जा रहा है। यह एक उदाहरण मात्र है बल्कि देश के कई गांवों व शहरों में इससे भी खौफनाक व गलत काम अंधविश्वास के नाम पर धड़ल्ले से अंजाम ले रहे हैं। डायन प्रथा के नाम पर आज भी स्त्रियों की देह के साथ तरह–तरह के टोटके आजमाएं जा रहे हैं।

राजस्थान

राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो की रिपोर्ट बताती है कि 1991 से लेकर 2010 तक देशभर में लगभग 1,700 महिलाओं को डायन घोषित कर उनकी हत्या कर दी गई। हालांकि राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो की ताजा रिपोर्ट के अनुसार, 2001 से लेकर 2014 तक देश में 2,290 महिलाओं की हत्या डायन बताकर कर दी गई। 2001 से 2014 तक डायन हत्या के मामलों में 464 हत्याओं में झारखंड अव्वल रहा तो ओडिशा 415 हत्याओं के साथ दूसरे स्थान पर है। वहीं 383 हत्याओं के साथ आंध्र प्रदेश तीसरे स्थान पर है। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार, 1987 से लेकर 2003 तक 2,556 महिलाओं की हत्या डायन के शक पर कर दी गई है। रिपोर्ट बताती है कि हर साल कम से कम 100 से लेकर 240 महिलाएं डायन बताकर मार दी जाती हैं। इनमें ज्यादातर मामलों के पीछे संपत्ति विवाद होता है या फिर ऐसी हत्या के पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य साधा जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, असम सहित कई अन्य राज्यों में डायन प्रथा के नाम पर अंधविश्वास का मकड़जाल फैला हुआ है।

अब अगर कानून की बात करें तो डायन हत्या का मामला गैरजमानती, संज्ञेय और समाधेय है। इसकी सजा 3 साल से लेकर आजीवन कारावास या 5 लाख रुपए तक का जुर्माना या दोनों हो सकती है। किसी को डायन ठहराया जाना अपराध है और इसके लिए कम से कम 3 साल और अधिकतम 7 साल की सजा हो सकती है। वहीं, डायन बताकर किसी पर अत्याचार करने की सजा 5–10 साल तक की है। किसी को डायन बताकर बदनाम कर दिए जाने के कारण अगर कोई आत्महत्या कर लेता है तो आरोपी का जुर्म साबित होने पर 7 साल से लेकर आजीवन कारावास की सजा हो सकती है। किसी को डायन बताकर उसके कपड़े उतरवाने की सजा 5–10 साल की कैद तय की गई है। किसी बदनीयती से डायन करार दिए जाने की सजा 3–7 साल और डायन बताकर गांव से निष्कासित किए जाने की सजा 5–10 साल की तय की गई है। बंगाल, महाराष्ट्र में अभी तक इस संबंध में कोई पुख्ता कानून नहीं है. अभी तक इन दोनों ही राज्यों में कानून का मसौदा ही तैयार हो रहा है।

कुछ ऐसे भी राज्य हैं जहां डायन हत्या की रोकथाम के लिए विशेष कानून बनाया गया है। ऐसे राज्यों में राजस्थान, झारखंड, छत्तीसगढ़ और असम के नाम आते हैं। छत्तीसगढ़ में 2005 में टोनही प्रताड़ना निवारण अधिनियम बनाया गया, जिसके तहत डायन बताने वाले शख्स को 3 से लेकर 5 साल तक की सजा का प्रावधान किया गया है। राजस्थान सरकार ने महिला अत्याचार रोकथाम और संरक्षण कानून 2011 में डायन हत्या के लिए अलग से धारा 4 को जोड़ा है। इस धारा के तहत किसी महिला को डायन, डाकिन, डाकन, भूतनी बताने वाले को 3–7 साल की सजा और 5–20 हजार रुपए के जुर्माने को भरने का प्रावधान किया गया है। अगस्त 2015 में असम विधानसभा ने डायन हत्या निवारक कानून पारित किया, क्योंकि इस राज्य में डायन हत्या एक बड़ी समस्या के रूप में उभर रही थी।वहीं, बिहार में 1999 और झारखंड में 2001 में डायन प्रथा रोकथाम अधिनियम आया। खेद का विषय यह है कि देश में डायन हत्या का चलन अभी भी खत्म नहीं हुआ।

ऐसे में सवाल तो यह भी है कि जिन राज्यों में कानून मौजूद है वहां भी इन अपराधों में गिरावट नहीं आंकी जा रही है। क्या महज कानून बनाने से अंधविश्वास का अंत हो सकेगा? दरअसल इस अंधविश्वास का एक ही इलाज है वो है– विश्वास। जब हमारा विश्वास डगमगाने लगता है तो हमे अंधविश्वास की बैसाखियों की जरूरत पड़ती है। हमें समझना होगा कि किसी बाबा के द्वारा दी गई मालाएं, अंगूठी व ताबीज धारण करने व पकौड़े के साथ लाल और हरी चटनी खाने से किस्मत नहीं बदलेगी। इक्कीसवीं सदी में हम यदि भूत–प्रेत और डायन प्रथाओं का बोझ ढो रहे हैं तो यह हमारे देश के लिए सबसे बड़ा कलंक है। ये डिजिटल और स्मार्ट इंडिया के अरमानों पर पानी फेरने जैसा है। इस विकृत सोच को मिटाना होगा तभी भारत आगे बढ़ पाएगा।

(साभार : www.ichowk.in)

बीरुबाला : नाम से डरते हैं अपराधी

डायन हत्या के खिलाफ आवाज उठाने वाली असम की बीरुबाला

''डायन प्रथा के खिलाफ शुरुआती संग्राम में बहुत बाधाएं आईं मुझे लाठी–डंडे और धारदार हथियार से कई बार मारने का प्रयास किया गया। मुझसे लिखित में लिया गया कि मैं गांव में दोबारा कदम नहीं रखूंगी। मुझे पकड़कर चप्पलों की माला पहनाने के प्रयास किए गए। बहुत धमकियां मिलीं। लेकिन मैंने हार नहीं मानी। आज डायन–शिकार करने वाले लोग मेरे नाम से खौफ खाते हैं।''

72 साल की बीरुबाला राभा जब ये बातें कहती हैं तो उनका चेहरा साहस और आत्मविश्वास से चमकने लगता है। भारत सरकार ने असम की सामाजिक कार्यकर्ता बीरुबाला को 2021 में पद्मश्री पुरस्कार देने की घोषणा की गई। राभा जनजाति से आने वाली दुबली–पतली और छोटी कद काठी वाली बीरुबाला ने जादू–टोना करने वाले कथित अवतारों से अब तक 40 से अधिक ग्रामीणों की जान बचाई है। इनमें अधिकतर पीड़ित महिलाएँ हैं।

वे कहती हैं, ''पद्मश्री मिलने से मुझे बहुत खुशी हुई है। इससे डायन हत्या जैसे अंधविश्वास के खिलाफ आगे लड़ने में और मदद मिलेगी। क्योंकि इस तरह की मान्यता के बाद प्रशासन और बाकी के लोगों का पूरा सहयोग मिलने लगता है। मैं जब 1998 में झाड़–फूंक करने वाले देवधोनी अर्थात कथित अवतारों के खिलाफ खड़ी हुई थी उस समय प्रशासन से पूरी मदद नहीं मिलती थी, क्योंकि मैं अकेली थी और इसलिए लोग मेरी बात नहीं मानते थे। लेकिन 2005 में जब मेरा नाम नोबल शांति पुरस्कार के लिए नामांकित किया गया उसके बाद से पुलिस तथा प्रशासन के लोग मेरी मदद के लिए आगे आने लगे।''

आंदोलन की बदौलत बना कानून

डायन हत्या जैसी कुप्रथा के खिलाफ बीरुबाला के आंदोलन की बदौलत असम सरकार ने 2015 में असम डायन प्रताड़ना (प्रतिबंध, रोकथाम और संरक्षण) कानून बनाया। इस कानून में किसी को डायन करार देना या फिर डायन के नाम पर किसी का शारीरिक

और मानसिक उत्पीड़न करने को संज्ञेय अपराध माना जाता है और गैर जमानती धाराएं लगाई जाती हैं। इस कानून में अभियुक्तों को पांच वर्ष के कारावास से लेकर अधिकतम आजीवन कारावास की सजा हो सकती है। बीरुबाला कहती हैं, ''पहले के मुकाबले ग्रामीण लोगों में डायन हत्या को लेकर काफी जागरुकता आई है। इसके साथ ही कानून बनने से कुछ लोगों में डर भी पैदा हुआ है। शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार के साथ ही अब लोग ठगी करने वाले तांत्रिकों और ओझाओं के पास जाना छोड़ रहे हैं।''

वो कहती हैं, ''लेकिन जनजातीय समाज में यह अंधविश्वास और कुप्रथा अभी पूरी तरह खत्म नहीं हुई है। इसके लिए खासकर आदिवासी महिलाओं को शिक्षित करना बेहद जरूरी है। यह अंधविश्वास सैकड़ों साल पुरानी प्रथा की जड़ें हैं जिसे खत्म करने के लिए आगे बहुत काम करना है।''

दरअसल 1996 में बीरुबाला के बड़े बेटे धरमेश्वर को टायफाइड हो गया था और वह उसे लेकर गांव के एक वैद्य के पास गई थीं। वैद्य ने बीरुबाला से कहा था कि उनका बेटा एक जादूगरनी के चक्कर में पड़ गया है और वह उसके बच्चे की मां बनने वाली है और जैसे ही उस बच्चे का जन्म होगा, उनका बेटा मर जाएगा। लेकिन कई महीने बीत जाने के बाद भी उनके बेटे के साथ ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। वह कहती हैं, ''वैद्य की बात जब झूठी साबित हुई तो मुझे लगा कि ये लोग जादू–टोना कर हमारे आदिवासी समाज को नष्ट कर रहे हैं। महिलाओं को डायन बताकर प्रताड़ित किया जा रहा था। मैंने उसी वक्त ठान लिया कि हमारे समाज को डायन जैसी कुप्रथा और अंधविश्वास से मुक्त करवाना है। फिर मैंने गांव की महिला समिति से जुड़कर डायन संबंधी जागरुकता पर अंदर ही अंदर काम करना शुरू किया। इस दौरान कई गैर सरकारी संगठनों के लोगों से मुलाकात हुई और डायन हत्या जैसे अंधविश्वास के खिलाफ आवाज धीरे–धीरे बुलंद होती चली गई।''

पिछड़े आदिवासी गांवों में बड़े पैमाने पर मौजूद अंधविश्वास और स्वास्थ्य सुविधाएँ बुरी हालत में होने के कारण लोग नीम हकीम पर भरोसा करते हैं। यही कारण है कि ये लोग स्थानीय लोगों के साथ मिलकर फसल बर्बाद होने, बीमारी और प्राकृतिक आपदाओं के लिए औरतों को जिम्मेवार ठहराने लगते हैं। अकेली महिलाएं, विधवा और बुजुर्ग जोड़े मुख्य तौर पर इनके निशाने पर होते हैं। कई मामले ऐसे भी सामने आए हैं जिनमें आपसी रंजिश के कारण झाड़–फूंक करने वालों के साथ मिलकर निर्दोष लोगों को डायन बताकर प्रताड़ित किया जाता है।

बीरुबाला का मानना है कि इस अंधविश्वास के खिलाफ औरतों को लड़ना होगा। वह कहती हैं, ''यह मेडिकल साइंस का युग है। जब आप बीमार पड़ जाओ, तो डॉक्टर के पास जाओ न कि किसी नीम–हकीम के पास। जिन लोगों के मन में नफरत और हिंसा है वही लोग ऐसे अंधविश्वास को मानते हैं। जब मैं ग्रामीणों से ये बातें कहती हूं तो वे अब मेरी बात सुनते हैं। इस कुप्रथा में विश्वास करने वाले लोग अब मुझसे डरते हैं क्योंकि मेरे बुलाने पर एसपी–पुलिस पहुंच जाएगी।''

असम–मेघालय सीमावर्ती ग्वालपाड़ा जिले के ठाकुरबिला जैसे एक छोटे से गांव में रहने वाली बीरुबाला ने डायन हत्या के खिलाफ 22 साल पहले जब यह आंदोलन शुरू किया था उस समय उनके गांव के लोगों ने उन्हें तीन साल तक समाज से बाहर कर दिया था। लेकिन आज वह जहां भी जाती हैं, उनसे मिलने के लिए लोगों की भीड़ लग जाती है। लोग उनके साथ फोटो खिंचवाते हैं, सेल्फी और ऑटोग्राफ लेते हैं। पैर छूकर आशीर्वाद लेते हैं। असम के अलग–अलग हिस्सों में बीरुबाला को सम्मानित करने के लिए लोग कार्यक्रमों का आयोजन कर रहे हैं।

(साभार : www.bbc.com/hindi)

साजिश

जिस विधवा के पास जमीन, वह डायन

उड़ीसा और झारखंड के आदिवासी इलाकों की सच्चाई

झारखंड के आदिवासी गाँवों में तीस की उम्र पार कर चुकी हर अकेली महिला को डायन होने का डर सताता रहता है। ये महिलाएं हमेशा यही प्रार्थना करती हैं कि उनका गांव किसी भी तरह की दुर्घटना या प्राकृतिक आपदा से बचा रहे, वरना दोष उन पर ही आएगा और अंततः उन पर शारीरिक और सामाजिक हमले हो सकते हैं, और ज्यादातर मामलों में तो मौत भी हो सकती है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार, देश में डायन–बिसाही के सबसे ज्यादा मामले और उससे होने वाली मौतें झारखंड में दर्ज की गई हैं। राज्य पुलिस द्वारा जारी आंकड़ों से पता चलता है कि अकेले 2019 में ही डायन–बिसाही के कारण 27 मौतें दर्ज की गईं। 2018 में झारखंड में इसी तरह की 18 मौतें हुईं।

डायन–शिकार की प्रथाओं से होने वाली मौतों में वृद्धि के लिए अशिक्षा और पारंपरिक व प्रतिगामी उपचार पद्धतियों में विश्वास को कारण बताया गया है। सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी भी एक महत्वपूर्ण कारण मानी जाती है। हालांकि, डायन शिकार प्रथाओं के पीछे एक महत्वपूर्ण और छिपा हुआ कारण महिलाओं के भूमि अधिकार का मुद्दा है। इस कुप्रथा का शिकार होने वाली कई महिलाएं ज्यादातर वृद्ध और विधवाएं हैं जिन्हें समाज द्वारा ही सामाजिक पदानुक्रम में निचले स्तर पर रखा जाता है।

जब डायन हत्या के आरोप में महिलाओं की हत्या की जाती है, तो उनकी संपत्ति उनके पुरुष रिश्तेदारों के बीच बांट दी जाती है। ज्यादातर मामलों में, आरोप लगाने वाले महिला के पुरुष रिश्तेदार ही होते हैं। इन अपराध रिकॉर्डों को देखने वाले एक पुलिस अधिकारी का कहना है कि "उनमें से, ज्यादातर विधवाएँ और वृद्ध थीं... इसका मुख्य कारण, शक्तिशाली रिश्तेदारों से सुरक्षा या सुरक्षा का अभाव

था।'' इस प्रकार, यह स्पष्ट हो जाता है कि डायन हत्या एक ऐसी महिला की संपत्ति के लिए की जाती है जिसका कोई पुरुष उत्तराधिकारी नहीं होता।

डायन शिकार की घटना मुख्य रूप से झारखंड के संथाल और मुंडा जनजातियों में देखी जाती है। ओडिशा और आंध्र प्रदेश के आदिवासी समुदायों में भी यही देखा गया है। आदिवासी समुदायों में डायन शिकार का विश्लेषण महिलाओं पर पुरुषों के अधिकार को स्थापित करने की एक प्रक्रिया के रूप में किया जा सकता है। महिलाओं को नियंत्रित करने की इस सामाजिक प्रक्रिया में, हमेशा डायन घोषित किए जाने का खतरा बना रहता है, जो महिलाओं को प्रतिबंधित करेगा और उन्हें मानदंडों का पालन करने के लिए मजबूर करेगा। इन आदिवासी महिलाओं को लगातार डर रहता है कि सामाजिक रूप से निर्मित मानदंडों से कोई भी विचलित व्यवहार उन्हें डायन के रूप में पहचाना जाएगा। यह पितृसत्ता पर आधारित शक्ति पदानुक्रम की अभिव्यक्ति है। ऐसे उदाहरण भी हैं जब समुदाय की सभी महिलाओं को चुड़ैल के रूप में पहचाना जाता है। उड़ीसा में किए गए एक अध्ययन में एक उदाहरण था, जहां एक गांव की सभी महिलाओं को डायन घोषित किया गया था।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में आदिवासी महिलाओं को जमीन पर सीमित और सीमांत अधिकार प्राप्त हैं। आमतौर पर महिलाओं को मिलने वाले अधिकार दो श्रेणियों में आते हैं। एक, जो महिला को जमीन पर अधिकार देता है जिससे वह उसका और उसकी उपज का प्रबंधन कर सकती है और दूसरा, जमीन से होने वाली उपज में हिस्सा पाने का। झारखंड के गाँवों में, अविवाहित बेटियों को उन खाद्य फसलों पर अधिकार होता है जिनकी कटाई में उसने मदद की थी। लेकिन सबसे ज्यादा विवादित अधिकार विधवाओं के हैं। डायन–बिसाही प्रथाएं विधवाओं के जमीनी अधिकारों पर आधारित हैं। विधवा अपने बच्चों की 'पिता' बन जाती है और अगर उसके बेटे नाबालिग हैं, तो वह जमीन और अन्य संपत्तियों का प्रबंधन और नियंत्रण करती है। जब उसके बेटे वयस्क हो जाते हैं, तो वह जमीन को बेटों के बीच बांट देती है और जमीन या संपत्ति के हिस्से पर ठीक उसी तरह दावा करती है जैसे उसके मृत पति को उस समय मिलता था। अगर महिला के बेटों की बजाय बेटियां हैं, तो वह अपने पति से सारी जमीन और संपत्ति विरासत में पाती है और उनका प्रबंधन और नियंत्रण करती है। यह अधिकार उसके अविवा. हित रहने और गांव में रहने की शर्त पर है। इसलिए, पति और पिता के बिना एक संथाल महिला को अपनी जमीन पर अधिकार है। यह उनके पति या पिता के पुरुष रिश्तेदारों के दावों और अधिकारों के लिए एक प्रतिबंध के रूप में कार्य करता है। बच्चों वाली विधवा से ज्यादा, बच्चों के बिना विधवा का जमीन पर अधिकार उसके पति के पुरुष रिश्तेदारों के लिए समस्याएं पैदा करता है। ये महिलाएं सबसे असुरक्षित हो जाती हैं। इस प्रकार, जब गांव में किसी भी तरह की बीमारी या महामारी या किसी भी तरह की आपदा आती है तो उसकी जमीन हड़पने के लिए, उसके पति के पुरुष रिश्तेदार उसे डायन घोषित कर देते हैं। इस प्रकार ये पुरुष भूमि वाली विधवा को बुराई का स्रोत मानते हैं। जिन महिलाओं को डायन घोषित किया जाता है उन्हें बहिष्कृत कर दिया जाता है और उनकी जमीन उनके मृत पति के पुरुष रिश्तेदारों के पास चली जाती है। जब भी महिलाओं के पास कोई आर्थिक अधिकार होगा, उन्हें बुराई का स्रोत कहा जाएगा।

मुंडा समुदाय के विपरीत, संथालों में डायन ज्यादातर महिलाएं होती हैं। ओझा नामक जादूगर महिलाओं को डायन घोषित कर उनके अधिकारों से वंचित कर देते हैं। ये स्वयंभू जादूगर, जिन्हें ओझा कहा जाता है, आमतौर पर पुरुष होते हैं जिनसे गाँव के लोग तब सलाह लेते हैं जब गाँव में कोई असामान्य घटना घटती है या लोग बीमार पड़ते हैं। ओझा, जो इन बीमार लोगों का इलाज नहीं कर पाते, आमतौर पर गाँव में किसी दुष्ट तत्व की मौजूदगी को इसका कारण बताते हैं। ग्रामीणों का मानना था कि ओझा द्वारा अनुष्ठान करने पर ये दुष्ट तत्व नष्ट हो जाएँगे। पहला चरण होता है डायन करार दी गई महिला को पितृसत्तात्मक मानदंडों पर आधारित कुछ सामाजिक रूप से स्वीकृत व्यवहारों तक सीमित रहने के लिए मजबूर करना। जब गाँवों में बार–बार त्रासदियाँ होती हैं, तो ओझा आकर पूरे गाँव के सामने उस महिला को डायन घोषित कर देते हैं। तब तक महिला के पुरुष रिश्तेदार चालाकी से गाँव वालों के बीच यह सहमति बना लेते हैं कि कोई खास महिला डायन है। फिर उस महिला को या तो गाँव से भगा दिया जाता है या मार दिया जाता है। विभिन्न संगठन इस प्रथा के विरुद्ध लड़ रहे हैं और महिलाओं को कानूनी तंत्र के माध्यम से अपने भूमि अधिकारों की रक्षा करने में मदद कर रहे हैं। सेंटर फॉर सोशल जस्टिस और आनंदी उनमें से कुछ हैं। व्यवस्था में क्रमिक परिवर्तन के माध्यम से इस कुप्रथा को रोका जा सकता है। महिलाओं को शिक्षा और कौशल प्रदान करना व्यवस्था में बदलाव लाने के लिए महत्वपूर्ण तंत्र हैं।

(साभार : proactiveforher.com)

अंधविश्वास

चित्र साभारः scroll.in

शर्मनाक : 2025 में भी हो रही डायन हत्या

यूरोप और अमेरिका के कई इलाकों में तेरहवीं शताब्दी से लेकर सत्रहवीं शताब्दी तक, महिलाओं को अलग अलग कारणों से डायन बता कर जिंदा जला दिया जाता था। कई मामलों में पुरुषों के साथ भी ऐसा होता था। अट्ठारहवीं शताब्दी आते आते कई देशों में इसके खिलाफ कानून लाए गए। आखिरकार इस प्रथा पर रोक लगी। हालांकि, इस बात का कोई आधिकारिक आंकड़ा मौजूद नहीं है कि कितने लोगों की मौत इस अंधविश्वास के कारण हुई।

यूरोप में आखिरी बार, 1734 में डायन बताकर जिस महिला का सिर कलम किया गया, उसका नाम आना गोल्डी था। इतिहास में उनका जिक्र 'आखिरी डायन' के नाम से भी मिलता है। यह करीब ढाई सौ साल पहले का यूरोप था, लेकिन वर्तमान के भारत के कुछ राज्यों में आज भी डायन प्रथा जारी है। साल 2025 में भी किसी महिला के आखिरी डायन होने का दावा नहीं किया जा सकता। इस प्रथा के जारी रहने की वजहें आज भी वही हैं अंधविश्वास और लैंगिक रूढ़िवाद।

हालिया घटना बिहार के पूर्णिया जिले की है। 6 जुलाई 2025 की रात, टेटगामा गांव के ललित कुमार के माता–पिता, दादी, भाई और भाभी को जिंदा जला दिया गया। गांव वालों को शक था कि परिवार जादू टोना करता है और मृतक महिलाओं पर डायन होने का शक था। समाचार एजेंसी एएनआई से बातचीत के दौरान ललित ने कहा, ''मुझे तो विश्वास ही नहीं हो रहा कि मेरे परिवार को जिंदा जला दिया गया।'' पूर्णिया के जिलाधिकारी अंशुल कुमार के मुताबिक करीब 150 अज्ञात लोगों पर एफआईआर दर्ज की गई है। राष्ट्रीय आपराधिक ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि साल 2000 से लेकर अब तक भारत में डायन बताकर करीब 2500 से अधिक महिलाओं की हत्या की गई है। यह हत्याएं सिर्फ

अंधविश्वास

अंधविश्वास का नतीजा नहीं हैं बल्कि लिंग, जाति, अशिक्षा, वर्ग संघर्ष जैसे कई कारण इन हत्याओं की वजह बनते हैं। डायन का आरोप लगाकर महिलाओं की हत्या के अलावा सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार, उन्हें मल मूत्र खिलाना, यौन हिंसा, मारपीट जैसी यातनाएं दी जाती हैं।

भारत की नारीवादी संस्था निरंतर ट्रस्ट ने 2023–24 में डायन प्रथा पर एक सर्वे किया था। सर्वे के मुताबिक बिहार में करीब 75,000 महिलाएं इस डर में जीती हैं कि उन पर डायन होने का आरोप मढ़ दिया जाएगा। सर्वे में शामिल 10 जिलों के 114 गांवों में कम से कम दो महिलाएं ऐसी जरूर मिलीं जिन्हें यह डर था। संस्था ने ऐसी 145 महिलाओं से भी बात की जिन पर कभी डायन होने या जादू टोना करने का आरोप लगाया गया था।

जिन महिलाओं पर ऐसे आरोप लगाए गए उनमें से सिर्फ एक महिला ही सवर्ण जाति की थी। सात महिलाएं मुस्लिम, 82 महिलाएं पिछड़ी जातिओं, 6 महिलाएं अनुसूचित जनजाति और 51 अनुसूचित जाति से थीं। 74 फीसदी महिलाओं की उम्र 45 से अधिक थी और उनमें से अधिकतर अशिक्षित थीं। रोजगार के नाम पर 67 फीसदी महिलाएं, दिहाड़ी मजदूरी करके अपना काम चला रही थीं। संतोष शर्मा निरंतर ट्रस्ट से जुड़ी हैं और इस सर्वे में भी वह शामिल थी। डीडब्ल्यू से बातचीत के दौरान उन्होंने बताया ''हमारे अध्ययन में जिन महिलाओं को डायन बताया गया, उनमें अधिकांश दलित और मुस्लिम समुदाय से थीं, जिनके पास कम सामाजिक, आर्थिक संसाधन हैं और जिनको समाज आसानी से निशाना बना सकता है।'' शर्मा का कहना है, ''जब हम गांवों में फील्ड वर्क कर रहे थे तो मैं एक महिला से बात कर रही थी, मैंने उनसे पूछा कि क्या ऊंची जातियों में भी ऐसी घटनाएं होती हैं? उन्होंने साफ कहा, ''नहीं, कोई हिम्मत नहीं करता किसी ऊंची जाति की औरत को डायन कहने की।''

पिछड़ी जातियों से होने के साथ साथ गरीबी भी इन महिलाओं को डायन बताने की बड़ी वजह है। ट्रस्ट के सर्वे में यह भी निकलकर आया कि वे महिलाएं जो ज्यादा पूजा पाठ करती हैं, उन पर डायन होने का शक अधिक होता है। सर्वे में शामिल महिलाओं ने इसे ऐसे समझाया, ''ऊंची जातियों से आने वाले लोगों के घर पक्के होते हैं, दीवारें होती हैं, दरवाजे होते हैं। हमें नहीं पता कि उनके घरों के अंदर क्या हो रहा है। लेकिन हमारे घर कच्चे होते हैं, सब कुछ खुला होता है। हम क्या खा रहे हैं, पूजा कर रहे हैं या नहीं, कहां नहा रहे हैं। सब कुछ समाज के सामने होता है। इसलिए हमें निशाना बनाना आसान होता है।''

डायन प्रथा की घटनाएं सिर्फ बिहार नहीं बल्कि असम, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान जैसे राज्यों में भी दर्ज होती हैं। इन घटनाओं से यह तस्वीर साफ होती है कि गरीब, शोषित जातियों से आने वाली महिलाएं इस प्रथा से सबसे अधिक पीड़ित हैं। संतोष कहती हैं, ''मेरा मानना है कि यह प्रथा इसलिए बनी हुई है क्योंकि यह गरीब और हाशिये की महिलाओं की समस्या है। उनके पास ना सामाजिक ताकत है, ना नेटवर्क, ना आर्थिक संसाधन।''

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस में प्रकाशित एक पेपर के मुताबिक, जिन महिलाओं को प्राचीन यूरोप में डायन बताकर निशाना बनाया जाता था वे भी हाशिये से आती थीं। जैसे विधवा महिलाएं या जिनकी शादी नहीं हुई है या जिनका कोई पुरुष अभिभावक ना हो उन्हें समाज कमजोर महिला के तौर पर देखता था। फ्रांस में उन महिलाओं को भी डायन बता दिया जाता था जो पेशे से नर्स थीं। खासकर तब जब अगर प्रसव के दौरान मां या बच्चे की मौत हो जाती तो नर्स को इसका दोषी माना जाता था।

कई सौ साल बीत जाने के बाद वजहें आज भी कमोबेश वही नजर आती हैं। संतोष शर्मा कहती हैं, ''हमारी रिपोर्ट में शामिल 56 फीसदी महिलाएं किसी ना किसी नेतृत्व की भूमिका में थीं, जैसे आशा कार्यकर्ता, सहयोगी या गांव स्तर की समितियों की सदस्य। वे बाहर जाती थीं, लोगों से बातचीत करती थीं तो यह समाज की सीमाएं लांघने जैसा था। इसलिए समाज उन्हें उनकी 'औकात' दिखाना चाहता है। हमारा सर्वे यह दिखाता है कि जो महिलाएं मुखर होती हैं, नेतृत्व की भूमिका में होती हैं, उन्हें अधिक खतरा होता है।

बिहार उन पहले राज्यों में से भी एक है जहां डायन प्रथा के खिलाफ कानून लाया गया। असम, राजस्थान, छत्तीसगढ़, ओडिशा और झारखंड में भी डायन बताकर किसी को प्रताड़ित करना अपराध के दायरे में आता है। हालांकि कानूनों की मौजूदगी के बीच लैंगिक अपराध के इस रूप का सामान्यीकरण हो चुका है। आंकड़ों के मुताबिक यह घटनाएं आमतौर पर ग्रामीण, पिछड़े इलाकों में दर्ज की जाती हैं। सर्वे में जिन महिलाओं पर डायन होने का आरोप लगाया गया उन्होंने बताया कि अगर वे इस बात की शिकायत करती भी हैं तो उन्हें कार्रवाई की कोई उम्मीद नहीं रहती है। महिलाओं का कहना था कि अगर वे इसकी शिकायत करेंगी तो समाज और समुदाय उनका और दुश्मन बन जाएगा। संतोष इस बात से सहमति जताते हुए कहती हैं, ''हमने 81 पंचायतों से बात की तो अधिकतर ने कहा कि उन्हें बिहार के डायन निषेध अधिनियम के बारे में कोई जानकारी नहीं है। पंचायतें, जो पहले संपर्क बिंदु होनी चाहिए, उन्हें खुद नहीं पता कि ऐसा कोई कानून है। उन्हें ना इसकी कॉपी मिली, ना कोई फंड। सिर्फ पांच फीसदी पंचों ने कहा कि उन्होंने इस मुद्दे पर कभी चर्चा की थी। जो संस्थाएं इसे रोक सकती हैं, वे खुद जागरूक नहीं हैं।''

संतोष यह भी कहती हैं कि चूंकि ये महिलाएं समाज के कमजोर तबके से आती है इसलिए इन घटनाओं के खिलाफ उतना आक्रोश नहीं दिखता। उनका कहना है, 2012 दिल्ली गैंगरेप की घटना हो या 2024 में आरजीकर रेप केस तब जो रोष और आंदोलन हमने देखा वह तब नहीं होता जब कोई दलित लड़की के साथ लैंगिक हिंसा होती है। सरकार और समाज तभी प्रतिक्रिया देते हैं जब मामला प्रभुत्वशाली वर्ग की महिलाओं का होता है।''

(साभार : www.dw.com)

!! डायन !!

संगीता मिश्र

सुप्रसिद्ध कवयित्री एवं लेखिका

उसकी भूख बड़ी विकराल
और खाऊँ ?... क्या खाऊँ ?...
बस टपकाती है राल
कितना भी खा ले,
नहीं मिटती उसकी क्षुधा
स्त्रियाँ खाती हैं पुरुषों को,
ऐसा ही तो होता है, बहुधा
यदि विवाह योग्य हुई
और पिता मर जाएँ तो?
तो बस... खा गई वह अपने पिता को
वही पिता जिनकी
तर्जनी का एक अनुकंपन
करता है उसका दिशा–निर्धारण
और यदि विवाहिता हुई
और पति मर जाए तो?
तब तो और भी सरल है
कह देना कि खा गई पति को
वही पति जो असंख्य व्रत–उपवास
और अनवरत चलते
तीज–चौथ के उपरांत
इतना सुकुमार? मानों हो
छुईमुई का फूल मात्र
और पत्नी? एक डायन–घृणा की पात्र
जिसकी क्षुधा है अदम्य, अतृप्त
कैसे मुँह उठा कर चलती है, देखो
तो–निर्लज्ज, निकृष्ट
वृद्धावस्था को पहुँचते–पहुँचते
बेटे को भी लील गई
ऐसी ही जठराग्नि लेकर डायन जन्मी और
बीत गई
पिता, भाई, पति, पुत्र– सब खा सकती हैं
डायनें
बस एक ही निवाले में...!

....

एक दिन गली के मोड़ पर, सहसा,
वह मुझे मिली
थी तो वो डायन ही, पर तनिक कम
उत्कटता वाली
उसने जन्मी थीं सात–सात बेटियाँ
और खा गई ससुराल की समस्त पीढ़ियाँ...

जीने दो

सारे वंश, उपवंश, सब निगल बैठी
जिस दिन जन्मी उसकी दूसरी बेटी
तदनुसार... तदुपरांत–
हर बार डायन का अभिषेक होता प्रसव के तुरंत बाद
मदिरा मद में चूर उसका पति...पुत्री शोक का मारा...
उसके केश पकड़ सौरी से बाहर घसीट लाता
डायन के वस्त्रहीन रक्तरंजित अधोभाग का होता
विधिपूर्वक राज्याभिषेक
मैंने इन्हीं आँखों से देखा था उस क्रूरता का अतिरेक
फिर भी लिखती रही हूँ दारुण कविताएँ
सुनाती रही हूँ वीभत्स कथाएँ!

....

उस दिन गली के मोड़ पर जब वह मुझे मिली
हँस कर बताया कि अब वह डायन नहीं कहलाती
आठवीं बार बेटा जो पैदा किया... और नौवीं बार भी
अब तो उतर चुका है सातों बेटियों का भार भी
कुछ, जो संपन्न–अधेड़ विधुरों को ब्याह दी गईं हैं
सुखी हैं, किंचित, डायन नहीं कहलातीं हैं
शेष बची बच्चियाँ अपनी–अपनी बारी की प्रतीक्षा में
व्यस्त हैं घर–घर बर्तन–चौका में
और सीख रहीं हैं डायन के नित नए पर्यायवाची शब्द
कालिख से लिखवाकर लाईं मानो अपना प्रारब्ध
उनकी भूख भी धीरे–धीरे हो रही है विकराल
छोटी डायनें अनभिज्ञ हैं कि उनके पास भी है राल
खटता है शरीर, मरती–खपती उनकी अस्थिमज्जा
पर न मिटी है, न ही कभी मिटेगी उनकी क्षुधा
नन्हीं डायनों का बित्ते भर का पेट भी पाले नहीं पलता
क्योंकि पेट से परे है उनके पालनहारों की बुभुक्षा !

....

मुहल्ले की सभी माँएँ थीं उससे भयाक्रांत
सारी पत्नियाँ, नवविवाहिताएँ भी भला कैसे रहतीं शांत?
उसने अपने घर से बाहर पाँव रखा नहीं कि...सन्नाटा
द्वार–झरोखे, आँखें–कान, सब बंद कर मुहल्ला सो जाता
बस मुँह खुलते थे...फुसफुसाते...
डायन...डायन...डायन... बड़बड़ाते...
डिठौना लगाया जाता हर सुन्दर बच्चे की ललाट पर
और हर रोग, हर संक्रमण का दोषारोपण डायन पर
लाल मिर्चें जलाई जातीं
हरी मिर्चें टाँगी जातीं
कहते हैं, 'डायनपन' विद्या उसने बड़े यत्न से पाई थी
कहते हैं उसने बहुत पढ़ाई की
डायनों के बेटे नहीं होते, सो अपने बेटे की बली दे दी
कुछ नहीं! बस अपना विषैला दूध ही तो पिलाती थी
और अब तो वह दो–दो बेटियों की माँ भी थी
जैसा एक डायन को होना चाहिए, बिल्कुल वैसी थी
उसकी बी.ए. की डिग्री पर भारी थी
मनोनीत उपाधि 'डायन' की !

....

एक दिन स्कूल जाते हुए वो मुझे रास्ते में मिली
साथ थी उनकी बेटी, मेरी सहपाठिनी
मेरे माथे पर हाथ फेरा डायन ने, बड़े ही दुलार से
बेटी से कहा, तुम दोनों मिलजुल कर रहना प्यार से
मुझे मिठाई भी खिलाई
कुछ तो ऐसा था उनमें कि मना न कर पाई
पर... इतनी सारी कहानियाँ भी तो थीं सुनी सुनाई
कि जिसपर उसने कुदृष्टि डाली, उसकी क्या गत बनाई
आशंका की मारी, उन दिनों बस यही सोचती रहती मैं
कि कहीं मर तो नहीं जाऊँगी मैं?
कि कहीं झड़ तो नहीं जाएँगे मेरे सारे सुंदर केश?
कहीं सचमुच डायन ने ही तो न धरा था ममतामयी वेश
कहीं यह सोलहवीं शताब्दी ब्रिटेन की कोई प्रचलित
लोककथा तो नहीं
कहीं मैं उस कथा की कोई अभिशप्त नायिका तो नहीं
क्या–क्या रंग न दिखाता डायन का वह एक दुलार भरा
स्पर्श
ऐसे ही संशय में बीत गए मेरे कई वर्ष !

....

पर देखो तो !
मैं आज तक हूँ स्वस्थ, सुरक्षित, सुघड़, सयानी...
सुना रही हूँ आपको उस डायन की कहानी...
उस दिन वह मेरे कान में चुपके से कह गई जो बात
सच्ची
"कुछ भी हो जाए, पर तुम पढ़ना–लिखना मत छोड़ना,
मेरी बच्ची!"

हकीकत

अकेली महिलाओं को बनाते हैं निशाना

इन महिलाओं को अक्सर उनके समुदाय से बहिष्कृत कर दिया जाता है, एकांतवास में धकेल दिया जाता है और कोड़े मारने, यौन उत्पीड़न और कुरूप करने जैसी भयानक हिंसा का शिकार बनाया जाता है।

जादू–टोना के नाम पर होने वाली यह बर्बर प्रथा, जो अंधविश्वास और पितृसत्ता पर आधारित है, झारखंड में कानूनी प्रतिबंधों के बावजूद आज भी प्रचलित है। यह प्रथा मुख्य रूप से महिलाओं, विशेषकर वृद्ध, अविवाहित, विधवा, निःसंतान या हाशिए पर रहने वाले समुदायों की महिलाओं को निशाना बनाती है, लेकिन परिवार के पुरुष सदस्य और रिश्तेदार भी इससे प्रभावित होते हैं। जादू–टोना के शिकार लोगों को अक्सर फसल खराब होने, बीमारी या परिवार के किसी सदस्य की असमय मृत्यु जैसी विपत्तियों का कारण बताया जाता है। इन आरोपों का इस्तेमाल प्रायः व्यक्तिगत दुश्मनी निकालने के लिए किया जाता है, जो अक्सर भूमि विवाद या अन्य शिकायतों से प्रेरित होती हैं। स्थानीय तांत्रिकों, जिन्हें ओझा कहा जाता है और जो डायनों की पहचान करने का दावा करते हैं, की उपस्थिति इन प्रथाओं को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालांकि झारखंड सहित कई राज्यों ने जादू–टोना पर अंकुश लगाने के लिए कानून बनाए हैं, लेकिन उनका कार्यान्वयन अनियमित रहा

है। स्थानीय समुदायों में जागरूकता की कमी और प्रतिरोध की कमी, साथ ही आदिवासी सरदारों जैसे प्रभावशाली व्यक्तियों की मिलीभगत के कारण जादू–टोना बिना किसी दंड के जारी है।

जादू टोना करने के आरोप में फंसी महिलाओं को अक्सर सामाजिक कलंक और हिंसा का सामना करना पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक शोषण, सार्वजनिक अपमान और यहां तक कि हत्या भी हो जाती है। इन महिलाओं को अक्सर उनके समुदाय से बहिष्कृत कर दिया जाता है, एकांतवास में धकेल दिया जाता है और कोड़े मारने, यौन उत्पीड़न और कुरूप करने जैसी भयानक हिंसा का शिकार बनाया जाता है। यह प्रथा आदिवासी और दलित जैसे सामाजिक रूप से हाशिए पर रहने वाले समूहों की महिलाओं को असमान रूप से प्रभावित करती है, जो शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और आर्थिक संसाधनों की कमी के कारण अतिरिक्त रूप से असुरक्षित होती हैं। कार्यकर्ताओं के अनुसार, अकेले झारखंड में ही जादू टोना के नाम पर हर साल लगभग 40–50 महिलाओं की हत्या कर दी जाती है। झारखंड सहित कई राज्यों में जादू टोना विरोधी कानून होने के बावजूद, कानून प्रवर्तन एजेंसियां इस सामाजिक बुराई से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए पर्याप्त रूप से सुसज्जित नहीं हैं।

ब्रिटिश औपनिवेशिक काल से पहले भी डायन प्रथा के ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं। यह आम बात थी कि व्यक्तियों, विशेषकर महिलाओं पर, ईर्ष्या से लेकर भूमि विवाद या अज्ञात विपत्तियों जैसे विभिन्न कारणों से जादू–टोना करने का आरोप लगाया जाता था। समय के साथ, ये मान्यताएँ पितृसत्तात्मक सामाजिक मानदंडों के साथ जुड़ गईं, जो महिलाओं, विशेषकर वृद्ध, अविवाहित, विधवा या निःसंतान महिलाओं को समाज पर बोझ मानते थे। ऐसी महिलाएं अक्सर जादू–टोना के आरा. ेपों का आसान निशाना बन जाती थीं। कई क्षेत्रों में डायन–शिकार की प्रथा संस्थागत रूप ले चुकी थी, जिसमें ओझाओं को डायनों की पहचान करने और हिंसक उपचार निर्धारित करने का कार्य सौंपा जाता था।

पर्याप्त नहीं हैं मौजूदा कानून

जादू–टोना रोकने के उद्देश्य से बनाए गए कानूनों, जैसे बिहार का जादू–टोना निवारण अधिनियम, 1999 (जिसे झारखंड ने 2001 में कुछ संशोधनों के साथ अपनाया), के बावजूद कानून प्रवर्तन अपर्याप्त बना हुआ है। कई पुलिस अधिकारी इन कानूनों से अनभिज्ञ हैं या उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण का अभाव है। इसके अलावा, स्थानीय समुदाय अक्सर पारंपरिक मान्यताओं और स्थानीय नेताओं के प्रभाव के कारण इन कानूनों के कार्यान्वयन का विरोध करते हैं। उदाहरण के लिए, ओझा या तांत्रिक, अवैध होने के बावजूद, ग्रामीण क्षेत्रों में अपना दबदबा बनाए हुए हैं, जहां उनके आरोपों को अक्सर सत्य मान लिया जाता है। कार्यकर्ताओं ने लंबे समय से जादू–टोना को बढ़ावा देने में ओझाओं और आदिवासी सरदारों की भूमिका के लिए उन्हें जवाबदेह ठहराने सहित कड़े कानूनी उपायों की मांग की है। जादू–टोना को अपराध घोषित करने और अपराधियों के लिए कठोर दंड सुनिश्चित करने वाले एक व्यापक राष्ट्रीय कानून की भी तत्काल आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, ऐसे जघन्य अपराधों के परिणामों से निपटने के लिए पीड़ितों के पुनर्वास, मुआवजे और मानसिक स्वास्थ्य सहायता के लिए मजबूत तंत्र अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2000 से अब तक जादू–टोने के आरोप में 2500 महिलाओं की हत्या की जा चुकी है।

क्राइम इन इंडिया रिपोर्ट 2022 से पता चलता है कि अकेले 2022 में भारत में जादू–टोने से संबंधित लगभग 85 हत्याएं हुईं। सबसे अधिक प्रभावित राज्यों में झारखंड, ओडिशा, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ शामिल हैं, जिनमें से झारखंड में 2022 में जादू–टोने से संबंधित हत्याओं की तीसरी सबसे अधिक संख्या दर्ज की गई। झारखंड में 2022 में ऐसी 11 हत्याएं दर्ज

की गईं, जो पिछले वर्ष के मात्र 3 मामलों की तुलना में एक बड़ी वृद्धि है। छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश, जहां क्रमशः 25 और 20 मामले दर्ज किए गए, सूची में सबसे ऊपर हैं।

अशिक्षा और आसान न्याय नहीं मिलना

निरंतर ट्रस्ट द्वारा बिहार में 2023–24 में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला है कि जादू–टोना से संबंधित हिंसा को रोकने के उद्देश्य से बनाए गए जादू–टोना निवारण अधिनियम, 1999 के प्रावधानों के बावजूद, बिहार में कम से कम 75,000 महिलाएं जादू–टोना के आरोप के निरंतर खतरे में जी रही हैं। चौंकाने वाली बात यह है कि आरोप लगने वाली महिलाओं में से 97 प्रतिशत दलित, पिछड़ी या अति पिछड़ी जाति से हैं। इसके अलावा, 75 प्रतिशत पीड़ित महिलाएं 46 से 66 वर्ष की आयु के बीच थीं, जिनमें से कई आर्थिक रूप से कमजोर और अशिक्षित थीं। सर्वेक्षण में इन महिलाओं को न्याय पाने में आने वाली महत्वपूर्ण बाधाओं को भी उजागर किया गया है। चिंताजनक रूप से, केवल 31 प्रतिशत पीड़ितों ने ही अपने मामले अधिकारियों को बताए, और जिन्होंने बताए भी, उनमें से 62 प्रतिशत को कोई न्याय नहीं मिला। इसके अलावा, कई ग्राम प्रधान नेता जादू टोना निवारण अधिनियम से अनभिज्ञ रहे, सर्वेक्षण में शामिल 85 प्रतिशत नेता इस कानून से अपरिचित थे। ये निष्कर्ष गरीबी और निरक्षरता जैसे सामाजिक आर्थिक कारकों की भूमिका को रेखांकित करते हैं, जो महिलाओं को जादू टोना के शिकार का आसान निशाना बनाते हैं।

खराब स्वास्थ्य सेवा और पारंपरिक चिकित्सकों की भूमिका

इंडियास्पेंड द्वारा 2020 में किए गए एक अध्ययन में खराब स्वास्थ्य सेवा को डायन–विरोधी प्रथाओं के प्रचलन में एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में पहचाना गया, विशेष रूप से झारखंड में। राज्य की 75–95 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, जहां गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच सीमित है। ऐसे समुदायों में, लोग अक्सर चिकित्सा उपचार के लिए ओझाओं जैसे झोलाछाप चिकित्सकों का सहारा लेते हैं। ये चिकित्सक, जिनसे कभी–कभी मामूली बीमारियों के लिए भी परामर्श लिया जाता है, अंधविश्वासों का फायदा उठाते हैं और अक्सर महिलाओं को डायन बताकर उनकी बीमारियों या

मृत्यु का कारण बताते हैं। ओझाओं पर यह निर्भरता, खराब स्वास्थ्य सेवा अवसंरचना के साथ मिलकर, कमजोर महिलाओं के लिए एक खतरनाक वातावरण बनाती है।

झारखंड में डायन प्रथा के मामले

झारखंड के कई मामले डायन संबंधी गतिविधियों की क्रूरता को उजागर करते हैं। उदाहरण के लिए, मंदार गांव में 7 अगस्त 2015 को जादू–टोना करने के संदेह में पांच महिलाओं की हत्या कर दी गई। बाद में पता चला कि ये महिलाएं अपने गांव में शराब के सेवन के खिलाफ विरोध प्रदर्शन कर रही थीं, और उनकी मौत को उन्हें चुप कराने के प्रयासों से जोड़ा गया। एक अन्य मामले में, जून 2023 में 60 वर्षीय बासो ओरांव की हत्या कर दी गई, उन पर अपने गांव में 14 वर्षीय लड़के की हत्या का आरोप लगाया गया था। दिसंबर 2022 में, झारखंड के गिरिडीह के बांधबाद की रहने वाली शांति देवी को भीड़ ने उनके घर से घसीटकर बाहर निकाला, पीटा और डायन करार दिया। उनका जुर्म क्या था? गांव में बीमारियों और मौतों के लिए उन्हें दोषी ठहराया जाना।

शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा की भूमिका

जादू–टोने के मूल कारणों को दूर करने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और सामाजिक सेवाओं तक पहुंच में सुधार शामिल है। ओडिशा राज्य महिला आयोग द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि जादू–टोने के 27 प्रतिशत मामले बच्चों के स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से जुड़े थे, जबकि 43.5 प्रतिशत मामले वयस्कों की बीमारियों से संबंधित थे। समुदायों को उचित स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने से जादू–टोने के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है और जादू–टोने के मामलों में कमी लाई जा सकती है। इसके अलावा, विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में यौन और प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच में सुधार से प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं के लिए पारंपरिक चिकित्सकों पर निर्भरता कम हो सकती है।

कानूनी ढाँचे और कानून प्रवर्तन की भूमिका

बिहार और झारखंड जैसे विभिन्न राज्यों में जादू–टोना रोकथाम अधिनियम जैसे कानून मौजूद होने के बावजूद, जो जादू–टोना के आधार पर हिंसा को अपराध घोषित करते हैं, ये कानून इस तरह की हिंसा को रोकने में काफी हद तक अप्रभावी साबित हुए हैं। पार्टनर्स फॉर लॉ एंड डेवलपमेंट के एक अध्ययन में पाया गया कि पीड़ितों को पर्याप्त मुआवजा नहीं मिलता। पुलिस और प्रशासन भी हत्या होने तक मामलों में हस्तक्षेप न करके इस समस्या को और बढ़ा रहे हैं। सक्रिय हस्तक्षेप की इस कमी के कारण अपराधी बेखौफ होकर अपराध करते रहते हैं। कई मामलों में, अधिकारी कानूनी प्रक्रियाओं की जटिलताओं से बचने के लिए समझौता करने की सलाह देते हैं, जिससे पीड़ितों को न्याय मिलने में और भी बाधा आती है। भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) 1860 की धारा 323 (जानबूझकर चोट पहुँचाने का दंड) और धारा 295ए (धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने के इरादे से किए गए कृत्यों का दंड) के माध्यम से डायन–प्रथा से संबंधित अपराधों का प्रावधान करती है। हालांकि, ये कानून इस प्रथा को रोकने में अक्सर अपर्याप्त साबित होते हैं, क्योंकि इनमें डायन–प्रथा से जुड़े सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है। यही बात भारतीय न्याय संहिता 2023 पर भी लागू होती है।

झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़ और ओडिशा के अपने–अपने कानून हैं। झारखंड और बिहार में जादू–टोना निवारण अधिनियम का उद्देश्य जादू–टोना के खिलाफ कार्रवाई करना है, लेकिन इसके क्रियान्वयन और प्रभावशीलता को लेकर चुनौतियां बनी हुई हैं। असम में इससे भी सख्त कानून है, जिसके तहत किसी महिला पर डायन होने का आरोप लगाने पर आजीवन कारावास और 5 लाख रुपये तक का जुर्माना हो सकता है। कर्नाटक का अंधविश्वास निवारण अधिनियम, 2013, हालांकि पूरी तरह से जादू–टोना पर केंद्रित नहीं है, लेकिन जादू–टोना से संबंधित अपराधों सहित विभिन्न हानिकारक अंधविश्वासों को लक्षित करता है। राजस्थान महिला (अत्याचार निवारण एवं संरक्षण) अधिनियम, 2006 के तहत किसी महिला को डायन कहना या उस पर जादू–टोना का आरोप लगाना अपराध है, जिसके लिए तीन साल तक के कारावास और 5,000 रुपये तक के जुर्माने का प्रावधान है।

झारखंड में 'प्रोजेक्ट गरिमा'

2021 में झारखंड ने 'प्रोजेक्ट गरिमा' शुरू किया, जिसका उद्देश्य डायन–विरोधी प्रथाओं को समाप्त करना और पीड़ितों का पुनर्वास करना है। इस पहल में डायन करार दिए जाने की शिकार महिलाओं के लिए परामर्श, कौशल विकास और सहायता शामिल है। डायन प्रथा को रोकने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कानून लाने के प्रयास किए गए हैं, लेकिन ये प्रयास अब तक लगभग ठप हो चुके हैं। 2003 में महिला एवं बालिका (कपड़े उतारने, छेड़छाड़, यौन उत्पीड़न, डायन करार दिए जाने और देवदासी के रूप में चढ़ाए जाने की रोकथाम) विधेयक प्रस्तावित किया गया था, लेकिन वापस ले लिया गया।

(साभार : www.forwardpress.in में प्रकाशित मोहम्मद तबरेज आलम के आलेख का अंश)

सच्ची घटनाएं

"मुँह सी के अब जी न पाऊँगी जरा सबसे ये कह दो"

फोटो: Feminism in India

सच्ची घटनाएं

भगत के बुने जाल में फंसते हैं गांववाले

यह घटना राँची शहर से लगभग 40 कि.मी. दूर एक गाँव हेसियों की है। एक तरफ राँची शहर जहाँ विकास की गति में तेजी से भाग रहा है वहीं दूसरी तरफ अभी भी गाँव के लोग अंधविश्वास की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं। राँची शहर में जहाँ आवागमन के साधनों, हर प्रकार की आधुनिक सुख–सुविधाओं की भरमार है वहीं कुछ गाँवों में यातायात के साधनों तक का अभाव है। बरसात के दिनों में तो स्थिति यह हो जाती है कि अगर कोई ग्रामीण गाँव की नदी के दूसरे पार गया हुआ है और बरसात शुरू हो गयी है तो उसका गाँव लौटना असम्भव है। एक ओर जहाँ शहर के बच्चे विज्ञान और कम्प्यूटर की उलझी गुत्थियों को सुलझाते हैं वहीं दूसरी ओर कुछ गाँव के बच्चों ने आज तक विद्यालय का मुँह तक नहीं देखा है। स्त्रियों में शिक्षा की बात तो सोची भी नहीं जा सकती।

हेसियो ऐसा एक गाँव है जहाँ अप्रैल 1998 में एक दिन एक घटना घटी। इस गाँव के एक युवक सोमा मुण्डा के भाई कुडु मुण्डा को कोई गंभीर बीमारी हो गयी। काफी इलाज हुआ, पर वह ठीक नहीं हुआ, तब उसे मुरगडीह गाँव के एक ओझा को दिखाया गया। ओझा ने बतलाया कि सोमा मुण्डा की पत्नी मायके से थोपा भूत लायी है जिसकी वजह से उसकी बीमारी ठीक नहीं हो रही है। उपाय पूछने पर उस ओझा ने बताया कि पूजा–पाठ कर मुर्गी की बलि देनी होगी। इससे थोपा भूत सोमा मुण्डा के घर भेज दिया जाएगा और भूत वापस हो आएगा। बाद में पूजा–पाठ के बाद ओझा ने भूत को सोमा मुण्डा की पत्नी बंदा सरना के मायके भेज दिया। तत्पश्चात् कुडु की हालत में सुधार होने लगा। इसी बीच करमा मुण्डा नाम के एक अन्य व्यक्ति का लड़का रवीन्द्र और बेटी गुड्डी, दोनों बीमार पड़ गये। उनके सही इलाज के उद्देश्य से करमा मुण्डा अपने बच्चों को लेकर ससुराल गया। बीमारी का सही इलाज न हो पाने के कारण उसकी लड़की की मृत्यु हो गयी। लड़के की हालत में भी अपेक्षित सुधार नहीं हो पा रहा था। तब गाँव वालों ने उससे कहा कि जरूर किसी डायन या भूत–प्रेत का प्रकोप है। किसी अच्छे ओझा को बुलाकर सारे गाँव का भूत–डायन भगवाया जाय। गाँव वालों की सलाह मानकर करमा मुण्डा ने बंदगाँव के भगत मोहन सिंह मुण्डा को बुलाने का प्रबंध किया। लगभग 1500 रुपये खर्च कर मोहन सिंह मुण्डा को गाँव बुलाया गया। मोहन सिंह मुण्डा ने दावा किया कि गाँव में बहुत से भूत–प्रेत, डायनों को प्रक. ोप है। इन सभी से उनका अपराध कबूल करवाकर ही मैं दम लूँगा भूत भगाने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इसके लिए भगत ने एक खपड़ा लोहबान, पका हुआ चुक्का, काला–सफेद कपड़ा, मिठाई, कच्चा धागा, मुर्गा, केला, पीपल, सखुआ और बांस की डाल की मांग की। करमा मुण्डा ने कठिनाई से इन सामग्रियों का इंतजाम किया, क्योंकि उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। किसी तरह से अपने परिवार का भरण–पोषण वह करता था। मोहन सिंह मुण्डा भगत ने अपने सारे कर्मकाण्ड को खुले मैदान में प्रारम्भ किया। उस मैदान में हवन–स्थल बनाया गया जिसे चारों ओर से घेर दिया गया ताकि अंदर कोई आदमी जाय तो बाहर से दिखाई न पड़े। सिर्फ आदमी के घुसने लायक एक दरवाजा खोला गया। उसके अंदर भगत ने सुखआ, केला, बांस और करमा वृक्ष की डाल से बेदी बनायी। वहाँ कलकत्ता की काली, दिउड़ी माता और नवनी की पुतलियाँ प्रतीक रूप में बनाई। सारी पूजन–सामग्री से उनकी

सच्ची घटनाएं

पूजा शुरू की। भगत ने गाँव की सभी औरतों से चावल की एक–एक पोटली कपड़े में बांध कर मंगवाई थी जिस पर उनका नाम लिखा था। इसके अलावा हर घर से थोड़ा–थोड़ा चावल भी मंगवाया था। उसने उसे एक सूप और टोकरी में एकत्रित कर उसी पूजा–स्थल पर रखवाया। अब मंचोच्चारण के बाद वह उस चावल को बार–बार फेंटता और बीच–बीच में सामने रखी आग में लोहबान छिड़कता था। लो. हबान डालते ही धुएं का गुबार उठता था। साथ ही पूजा–स्थल पर एक सरसों तेल का दीप भी लगातार जला कर रखा था। उसके पूजन कार्य में किसी प्रकार का विघ्न न पड़े इसके लिए हथियार बंद पहरेदारों की टोली एकत्र की गई थी, जो दिन–रात पूजा स्थल की देख–रेख में लगे थे। साथ ही गाँव में माँस–मछली, मदिरा के सेवन पर पूर्णतः प्रतिबंध भगत ने लगवा दिया था।

हवन–स्थल में झांकने या देखने की पूरी रोक लगी हुई थी। भगत का कहना था कि अगर कोई भी व्यक्ति हवन–स्थल में झांक लेगा तो अनर्थ हो जाएगा। भयवश किसी भी गाँव वाले की हिम्मत नहीं हुई कि वह अंदर देख सके। प्रतिदिन भगत यज्ञ–स्थल में प्रवेश करता, मंत्रोच्चारण के रूप में बड़बड़ाता हुआ आहुति देता और लगभग आठ–दस मिनट ठहरने के बाद बाहर निकल आता। बाहर आकर भगत अपने पहरेदार के साथ गाँव में स्वेच्छा से घूमता जिस चीज की फरमाइश करता उसे तत्काल पूरा किया जाता था। उसपर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं था। उसके आवभगत का पूरा इंतजाम किया गया था। एक ओर जहाँ पूरे गाँव में मांस, मछली, मदिरा आदि पर प्रतिबंध लगा हुआ था वहीं दूसरी ओर भगत का भोजन एक कुंवारी लड़की बनाती थी। उसके भोजन में बढ़िया किस्म का चावल और मुर्गा रहता था और भगत दिन भर नशे में धुत रहता था। गाँव का हर व्यक्ति उस ओझा की तरफ एक आशाभरी नजरों से देखता रहता कि शायद आज गाँव की डायन का पता लग जाय। लेकिन उनकी आशा धरी की धरी रह जाती। उसका कर्मकाण्ड इसी तरह चलता रहा। एक दिन उस भगत ने गाँव वालों को यह कहा कि आज प्रत्येक घर की औरतें अपने घर से एक पोटली में चावल बांधकर और उसपर अपना नाम लिखकर ओझा के पास लायेंगी। उन सभी चावल की पोटलियों को एक बर्त्तन में डालकर पकाया जायेगा और जिसकी पोटली के चावल कच्चा रह जायेगा वही औरत डायन होगी। ओझा उन सभी पोटलियों में से उस औरत का नाम बता देगा जिसका चावल नहीं पका है। गाँव के सभी लोगों को यह विश्वास हो गया कि आज उक्त डायन का पर्दाफाश हो जाएगा जो गाँववालों को अपना शिकार बना रही है। इस बीच पूजा के दौरान ओझा सारे गाँव में घूम–घूम कर हर घर की स्थिति का जायजा ले चुका था कि किसकी स्थिति कैसी है। ओझा इस बात का निर्णय कर चुका था कि किसे अपना शिकार बनाना है जिससे प्रतिरोध का सामना भी उसे न करना पड़े। अब आग पर बर्त्तन चढ़ाया गया और पोटलियों को उस बर्त्तन में डाल दिया गया। गाँव के किसी व्यक्ति ने यह जानने, पूछने की कोशिश नहीं की कि सारी पोटलियाँ डाली गई हैं या नहीं। गाँववालों का उस ओझा के ऊपर पूरा विश्वास था कि ओझा का जो भी निर्णय होगा वह सही ही होगा। अब सभी ग्रामवासी चावल पकने तथा बिना पके चावल की पोटली के बाहर निकलने और ओझा द्वारा अमुक महिला को डायन करार दिये जाने का इंतजार करने लगे। गाँव वाले अज्ञानता के कारण यह भी नहीं जान पाये कि यदि सभी पोटलियों को पानी में उबाला जायेगा तब उन पर लिखा नाम मिट जायेगा। खैर, कुछ समय पश्चात् ओझा मोहन सिंह भगत ने यह घोषणा की कि गवरिया वाली का चावल नहीं पका। किसी ने घोषणा के पश्चात् यह देखा भी नहीं कि हकीकत क्या है, उसकी पोटली कहाँ गई? घोषणा करने के पश्चात् वह ओझा उस गाँव से भाग खड़ा हुआ। गाँव वालों को विश्वास हो गया था कि वही औरत, जिसे ओझा ने डायन करार दिया है, गाँव में होने वाले सभी बीमारियों का कारण है। उसकी मृत्यु के पश्चात् ही गाँव वालों को हर तरह के कष्ट से मुक्ति मिल सकती है। जिस महिला को ओझा ने डायन करार दिया था उसकी उम्र लगभग 50 वर्ष थी, वह विधवा थी। अपने एक बेटे लोहरा मुण्डा के साथ रहकर अपना गुजर–बसर करती थी। कुछ वर्षों पहले भी उसी महिला, जो गवरिया की रहने वाली थी, को ओझा ने डायन करार दिया था, कई तरह से बेइज्जत किया गया था। इस बार उसे डायन करार देने से गाँव वालों को उसके लक्षण पर भी शक होने लगा। चूंकि इस मामले में पुलिस अपना हस्तक्षेप कर चुकी थी अतः 20 दिनों तक जिन्दा रहने के पश्चात उस महिला की लाश लावारिस रूप में सड़क के किनारे मिली। लोगों की अज्ञानता और अंधविश्वास की बलिवेदी पर एक और महिला को चढ़ा दिया गया।

हवन–स्थल में झांकने या देखने की पूरी रोक लगी हुई थी। भगत का कहना था कि अगर कोई भी व्यक्ति हवन–स्थल में झांक लेगा तो अनर्थ हो जाएगा। भयवश किसी भी गाँव वाले की हिम्मत नहीं हुई कि वह अंदर देख सके। प्रतिदिन भगत यज्ञस्थल में प्रवेश करता, मंत्रोच्चारण के रूप में बड़बड़ाता हुआ आहुति देता और लगभग आठ–दस मिनट ठहरने के बाद बाहर निकल आता। बाहर आकर भगत गाँव में स्वेच्छा से घूमता। उसपर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं था।

(साभारः repository.tribal.gov.in/डा प्रकाश चंद्र उरांव की पुस्तक 'जनजातीय क्षेत्र में डायन प्रथा की समस्या एवं समाधान' से लिया गया एक अंश)

यूरोप का हाल

'शैतान की साथी' होती थीं औरतें!

'शैतान की साथी' लिलिस ऐडी की कब्र

15वीं–16वीं शताब्दी में यूरोप में डायन बिसाही की चर्चा जोरों पर थी। इन दिनों किसी भी आम महिला के मन में डर बना रहता कि कोई उस पर डायन होने का आरोप न लगा दे। ऐसा होने पर स्थानीय चर्च में महिला की कड़ी जांच की जातीय जो जांच कम प्रताड़ना ज्यादा होती। मारपीट कर महिलाओं से सवाल पूछे जाते। उन्हें कई दिनों तक भूखा रखा जाता। लोहे के गर्म सरिए से भी उनको दागा जाता। अगर चर्च के पादरी को लगता की महिला वाकई डायन है तो उसे मौत की सजा दी जाती। यूरोप के कुछ हिस्सों में तो दोषी ठहराए जाने की दर 85% तक थी।

डायन साबित हुई महिला का एक ही अंजाम होता– मौत। और यह मौत भी उन्हें आसानी से नहीं मिलती। काफी तड़पाने के बाद उन्हें जिंदा जला दिया जाता। लेकिन इन सबसे से भी बढ़कर एक आरोप लगता था जिसे सुनकर आज किसी को भी हंसी आ सकती है। डायन ठहराई गई महिलाओं पर डेविल यानी शैतान या प्रेत के साथ यौन संबंध बनाने के भी आरोप लगते थे।

कब्र, जिसमें सोई है 'शैतान की साथी'

टोरिबर्न स्कॉटलैंड का तटीय इलाका है। यहां समुद्र के बिल्कुल किनारे एक कब्र है। यह उस महिला की कब्र है, जिसपर डायन होने के आरोप लगे थे। आमतौर पर डायन ठहराई गई महिला को जलाकर मार दिया जाता था। जिसके चलते उनकी कब्र बनाने या दफनाने की नौबत ही नहीं आती। लेकिन लिलिस ऐडी नाम की इस महिला की मौत जांच के दौरान ही हो गई थी। जांच के दौरान होने वाली मार–पिटाई और प्रताड़नाओं को लिलिस झेल नहीं पाई थी। लिलिस की अकेली कब्र तभी नजर आती है, जब ज्वार–भाटे के दौरान समुद्र का पानी नीचे जाता है। बाकी समय यह कब्र समुद्र में समा जाती है। पूरे स्कॉटलैंड में यह अपनी तरह की इकलौती कब्र है। अपमानजनक तरीके से इस कब्र को अजीब शक्ल दी गई है। कब्र के ऊपर बड़े–बड़े पत्थर लगाए गए हैं। क्योंकि लोगों को डर था कि मरने के बाद भी डायन की आत्मा उन्हें परेशान कर सकती है।

जब यह कब्र पानी के बाहर आती है तो कई महिला संगठन यहां पहुंचते और उसे याद करते हैं। 15वीं–16वीं शताब्दी में डायन के बारे में 'पैक्ट विद डेविल' यानी प्रेत के साथ समझौते का कॉन्सेप्ट था। जिसके चलते यह माना जाता कि डायन ने बुरी आत्मा या प्रेत के साथ समझौता किया है। इस समझौते के बदले बुरी आत्मा या दूसरों को परेशान करने या मारने में डायन की मदद करते हैं। मान्यता थी कि इस समझौते का सबसे अहम हिस्सा प्रेत के साथ संबंध रखना होता था और शारीरिक संबंधों का लालच देकर डायन प्रेतों को अपने वश में करती थी। स्कॉटलैंड की लिलिस पर भी प्रेत के साथ संबंध बनाने के आरोप लगे थे। चर्च में इस संबंध की जांच चल ही रही थी कि उसकी मौत हो गई। चूंकि वह अपनी मौत के वक्त दोषी नहीं ठहराई गई थी, इसलिए उसे बाकी कथित डायन की तरह जलाया नहीं गया। बल्कि एक कब्र में दफन किया गया।

मारी गई हजारों महिलाएं

यूरोप में पूरे मध्यकाल के दौरान डायन बिसाही के शक में हजारों महिलाएं मारी

गईं। माना जाता है कि वर्ष 1560 से लेकर 1660 के बीच ही यूरोप में लगभग 50 हजार महिलाओं को डायन होने के शक में मारा गया। कई जगहों पर तो कथित डायनों का सजा देने के लिए स्पेशल कोर्ट तक बनाए गए थे।

कैथोलिक चर्च ने डायन–विरोधी प्रथाओं को बढ़ावा दिया

प्रारंभिक आधुनिक यूरोप और औपनिवेशिक अमेरिका में डायन विरोधी प्रथाओं का शास्त्रीय काल लगभग 1450 से 1750 तक चला, जिसमें धर्म सुधार आंदोलन और तीस वर्षीय युद्ध की उथल–पुथल शामिल थी। इसके परिणामस्वरूप अनुमानित 35,000 से 100,000 लोगों को फाँसी दी गई, जबकि नवीनतम अनुमान के अनुसार यह संख्या 40,000 है। यूरोप में डायन होने के आरोप में दोषी ठहराए गए लोगों को फाँसी देने की यह अंतिम घटना 18वीं शताब्दी में हुई। अफ्रीका और एशिया जैसे अन्य क्षेत्रों में, उपसहारा अफ्रीका और पापुआ न्यू गिनी से समकालीन डायन विरोधी प्रथाओं की सूचना मिली है और सऊदी अरब और कैमरून में आज भी जादू–टोने के खिलाफ आधिकारिक कानून मौजूद हैं।

इतिहासकार वोल्फगैंग बेहरिंगर ने डीडब्ल्यू को बताया कि इन तीन शताब्दियों के दौरान, ऐसा माना जाता है कि 50,000 से 60,000 लोगों को जादू टोना के तथाकथित अपराधों के लिए मार डाला गया था – यह संख्या उस समय के कुछ प्रमुख जर्मन शहरों की आबादी के लगभग दोगुनी है। लेकिन उनका कहना है कि अकेले 20वीं सदी में ही जादू–टोने के आरोप में जितने लोगों की बेरहमी से हत्या की गई, उतने यूरोप में तीन शताब्दियों तक चले डायन–शिकार के दौरान भी नहीं हुई थी। 1960 से 2000 के बीच, अकेले तंजानिया में जादू–टोने का अभ्यास करने के आरोप में लगभग 40,000 लोगों की हत्या कर दी गई। हालाँकि तंजानियाई कानून में जादू–टोने के खिलाफ कोई कानून नहीं है, फिर भी ग्राम न्यायालय अक्सर कुछ व्यक्तियों को मौत की सजा देने का फैसला करते हैं।

तंजानिया में, इन डायन–शिकार के शिकार अक्सर एल्बिनिज्म से पीड़ित लोग होते हैं। कुछ लोगों का मानना है कि इन व्यक्तियों के शरीर के अंगों का उपयोग सभी प्रकार की बीमारियों के खिलाफ औषधि बनाने के लिए किया जा सकता है। वहीं, घाना में, जहाँ हाल ही में 90 वर्षीय अकूआ डेंटेह की पीट–पीटकर हत्या कर दी गई थी, कुछ समुदाय विकलांग बच्चों के जन्म के लिए जादू–टोने को जिम्मेदार ठहराते हैं।

1542 से 1735 के बीच, इंग्लैंड और स्कॉटलैंड में, जादू–टोना अधिनियमों की एक श्रृंखला ने कानून में सजा (अक्सर मौत की सजा, कभी–कभी कारावास) को शामिल किया। जादू–टोना करने वाले व्यक्तियों के खिलाफ कार्रवाई जारी है। डच गणराज्य में किसी डायन को आखिरी बार संभवतः 1613 में फांसी दी गई थी। डेनमार्क में, यह घटना 1693 में अन्ना पालेस को फांसी दिए जाने के साथ घटी और नॉर्वे में डायन के रूप में आखिरी बार 1695 में जोहान निल्सडेटर को फांसी दी गई थी। नेपाल में भी डायन–प्रथा बहुत आम है और विशेष रूप से निम्न जाति की महिलाओं को निशाना बनाया जाता है। इस क्रूर प्रथा के मुख्य कारणों में अंधविश्वास, शिक्षा का अभाव, जन जागरूकता की कमी, निरक्षरता, जाति व्यवस्था, पुरुष प्रधानता और महिलाओं की पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता शामिल हैं।

भारत में डायन बिसाही के नाम पर हजारों हत्याएं

डायन बिसाही यूरोप में इतिहास का हिस्सा बन चुका है। लेकिन अपने देश में यह कुप्रथा आज भी बदस्तूर जारी है। देश भर में हजारों हत्याएं डायन होने के शक में की गई। इनमें से सबसे ज्यादा हत्याएं झारखंड में हुईं। डायन बिसाही के शक में प्रताड़ित होने और जान गंवाने वाली अधिकर महिलाएं ही थीं।

एनसीआरबी के आंकड़े के मुताबिक, मौजूदा वक्त में झारखंड, ओडिशा और असम में डायन बिसाही के सबसे ज्यादा मामले सामने आते हैं। कई बार तो डायन होने के आरोप में महिलाओं को खुद का मल–मूत्र पीने के लिए मजबूर किया जाता है। देश भर में डायन बिहासी के शक में महिलाओं पर बढ़ते जुल्म के बीच कई राज्यों ने डायन बिसाही को लेकर कड़े कानून बनाए हैं। झारखंड में ऐसा करने पर उम्र कैद तक की सजा हो सकती है। देश में किस तरह महिलाओं पर डायन होने के झूठे आरोप लगाकर उनको प्रताड़ित किया जाता है इसे जानने के लिए आदिवासी महिला दुर्गा महतो की कहानी पढ़ सकते हैं।

दुर्गा महतो ने अपने गांव के एक दबंग शख्स के साथ संबंध बनाने से इनकार कर दिया था। इससे खार खाए दबंग ने साजिश के तहत दुर्गा पर डायन होने के आरोप लगा दिए। जिसके बाद पूरे गांव में दुर्गा का बहिष्कार किया गया उसके और उसके घरवालों की बेहरमी से पिटाई की गई। गांव में हुए एक–दो पशुओं की मौत को उसने जादू–टोने से की गई हत्या बताकर इसके लिए दुर्गा को जिम्मेदार ठहराया। पूरे गांव में ऐसी बात फैला दी कि दुर्गा महतो डायन है। फिर एक दिन लाठी–डंडों से लैस होकर भीड़ दुर्गा महतो के घर पहुंची और पूरे परिवार पर हमला बोल दिया। बेहोश होने तक दुर्गा और उसके पति की पिटाई की गई। उसके सारे कपड़े फाड़ दिए गए। इसी स्थिति में उसे पंचायत के सामने पेश किया गया। जहां पंचों ने उसके सामाजिक बहिष्कार का फैसला सुनाया। दुर्गा काफी समय तक अस्पताल में भर्ती रहीं। जब वह ठीक होकर गांव लौटीं तो स्थिति और ज्यादा गंभीर हो गई। गांव में उनका बहिष्कार कर किया गया। उन्हें सार्वजनिक चापाकल से पानी भरने और गांव के तालाब में नहाने की भी इजाजत नहीं दी गई। (साभारः www.bhaskar.com/theamikusqriae.com)

मुश्किल हालात

डायन–पितृसत्ता और अंधविश्वास

महिलाओं को जमीन से बेदखल करने का हथियार

जब हम पितृसत्ता और अंधविश्वास इन दो भयानक शब्दों को मिलाते हैं, तो डायन प्रथा का जन्म होता है। डायन प्रथा में ग्रामीण महिलाओं को डायन होने या तांत्रिक शक्तियों से शिशुओं की हत्या करने के अंधविश्वासी आरोपों के आधार पर बेरहमी से मार डाला जाता है। भारत के राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो के अनुसार, 2000 से 2016 के बीच इस तरह की खोजों में 2,500 से अधिक भारतीयों का पीछा किया गया, उन्हें यातनाएं दी गईं और उनकी हत्या कर दी गई। कार्यकर्ता, पत्रकार और शोधकर्ताओं के अनुसार, यह संख्या अपराध अभिलेख ब्यूरो द्वारा उल्लिखित संख्या से कहीं अधिक है, लेकिन अधिकांश राज्य या तो इस संख्या को छिपाते हैं या जादू–टोने को हत्या के मकसद के रूप में दर्ज नहीं करते हैं।

यह प्रथा महिलाओं को निशाना बनाती है और भारत की जाति व्यवस्था और पितृसत्तात्मक संस्कृति का शोषण करती है। जो पुरुष महिलाओं को डायन या चुड़ैल करार देते हैं, वे स्त्री द्वेष और पितृसत्ता पर आधारित गहरी जड़ों वाली अंधविश्वासों का फायदा उठाकर महिलाओं पर दोष मढ़ते हैं। भारत में हिंसा का अध्ययन करने वाले समाजशास्त्री के अनुसार, जादू–टोने के आरोपों का इस्तेमाल उन बहुमूल्य जमीनों से महिलाओं को बेदखल करने के लिए किया

जाता है जिन पर पुरुषों की हड़प होती है, ऐसे क्षेत्र में जहां दोषपूर्ण विकास योजनाओं के कारण कृषि विफलताएं हुई हैं।

चलिए आपको 2014 में गुजरात ले चलते हैं, जहाँ मधुबेन, सुशीलाबेन और कमलाबेन नाम की तीन महिलाओं को गाँव के बीचोंबीच लोहे के पाइपों और लकड़ी के डंडों से बेरहमी से पीटा गया था। इसका कारण यह था कि गाँव में दो युवकों की मृत्यु हो गई थी और उनकी मृत्यु का दोष इन महिलाओं पर लगाया गया था। इन पर युवकों की आत्माओं को खाने का आरोप लगाया गया था, इसलिए इन्हें डायन कहा जाने लगा।

या फिर 2015 में असम की बात करते हैं, जहाँ लैला ओरंग काम पर जाते समय अपनी माँ को अलविदा कह गया। दोपहर में जब वह काम से लौटा, तो उसने अपनी माँ का बुरी तरह से क्षत–विक्षत सिर नदी के किनारे पड़ा पाया। बाद में पता चला कि स्थानीय लोगों का मानना था कि उसकी माँ डायन है, इसलिए उन्होंने उसे घसीटा, पीटा, निर्वस्त्र किया और उसका सिर काट दिया।

उसी वर्ष झारखंड के कंजिया में, उषा ओरोन की सास और तीन अन्य महिलाओं को नंगा करके ग्राम सभा स्थल तक ले जाया गया, जहाँ उन्हें पीट–पीटकर मार डाला गया। उनका आरोप था कि 17 वर्षीय लड़के की कैंसर से मृत्यु का कारण काले जादू से हुई थी और उन्हें चुड़ैल करार दिया गया था। बिहार के नालंदा जिले में एक बुजुर्ग महिला की बात करें, तो उनके चेहरे पर काला रंग लगा दिया गया, उनके बाल काट दिए गए और लाठियों से पीटा गया, सिर्फ इसलिए कि ग्रामीणों ने उन पर चुड़ैल होने का आरोप लगाया था।

गांव में आने वाली हर विपत्ति के लिए महिलाओं को निशाना बनाया जाता है और उन्हें चुड़ैल करार दिया जाता है, चाहे वह मृत्यु हो, सूखा हो या बीमारी। ओझा या बेज (ज्यादातर पुरुष) कहे जाने वाले तांत्रिक चुड़ैल के कथित बुरे प्रभाव को खत्म करते हैं। ओझा या बेज का एक शब्द ही ग्रामीणों को इकट्ठा होने और खून–खराबे वाली हिंसा करने के लिए काफी होता है, और वे आमतौर पर गैर–प्रमुख जाति की महिला को चुड़ैल मानकर उसका शिकार करते हैं और उसे न्याय के कटघरे में लाते हैं।

पार्टनर्स फॉर लॉ डेवलपमेंट द्वारा किए गए शोध के अनुसार, पितृसत्ता और अंधविश्वास इस बुरी प्रथा के पीछे एकमात्र कारण नहीं हैं। आर्थिक विवाद और अन्य व्यक्तिगत और सामाजिक संघर्ष भी इसके कारण हैं। अक्सर ये संघर्ष पीड़ित और उसके रिश्तेदारों, दोस्तों या परिचितों के बीच ईर्ष्या या तनाव से उत्पन्न होते हैं। कोई भी व्यक्ति जो जमीन या आर्थिक विवाद को सुलझाना चाहता है, वह चुड़ैल–शिकार को एक समाधान के रूप में अपना सकता है, खासकर यदि पीड़ित गैर–प्रमुख जाति का हो। एक पीड़ित के पति के अनुसार, ईर्ष्या इन लिंचिंग की घटनाओं के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण हो सकती है। डायन–शिकार की शिकार एक किशोरी की बेटी के शब्दों में, ''मैं अब भी अपनी माँ के हत्यारों को अपने सामने आजादी से घूमते हुए देखती हूँ। मुझे स्कूल जाते समय डर लगता है।''

इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि लड़की को अपनी माँ जैसा ही अंजाम न भुगतना पड़े। उसने न केवल अपनी माँ को

खोया है, बल्कि जीवन के प्रति निरंतर भय भी पाल लिया है। यदि अपराधी एक बार कानून के शिकंजे से बच सकते हैं, तो क्या दूसरी बार स्थिति अलग होगी?

1800 के दशक में डायन प्रथा को अपराध घोषित करने वाला कानून पारित किया गया था, लेकिन भारत की अधिकांश आबादी ने इसका विरोध किया। उनका मानना था कि यह कानून उन्हें अपराधियों को दंडित करने से रोकेगा। डायन प्रथा या डायन प्रथा दुनिया भर में प्रचलित है, लेकिन मुख्य रूप से हमारे देश के 12 से अधिक राज्यों में फैली हुई है। हालांकि, अब तक केवल 7 राज्यों ने ही इस प्रथा को अपराध घोषित करने वाले कानून बनाए हैं, जिनमें झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, राजस्थान और असम शामिल हैं। गुजरात इन राज्यों में शामिल नहीं है और वहां की महिलाएं इसके खिलाफ लड़ने के लिए अपने संसाधनों का उपयोग कर रही हैं। उनमें से एक महिला कहती हैं, ''हम एक–दूसरे की रक्षा करते हैं। इसी से हमें ताकत मिलती है।'' गुजरात की महिलाएं कानून का अध्ययन कर रही हैं और स्थानीय पुलिस स्टेशनों में एक डेस्क की मांग कर रही हैं ताकि वे हिंसा की रिपोर्ट करने आने वाली महिलाओं के लिए आवाज उठा सकें और बेआवाज लोगों की आवाज बन सकें।

1999 में, बिहार ने डायन प्रथा निवारण अधिनियम पेश किया, जिसे झारखंड ने डायन प्रथा निवारण अधिनियम के रूप में अपनाया। झारखंड जादू टोना विरोधी अधिनियम, 2001 के तहत डायन–विरोधी गतिविधियों को संज्ञेय और गैर–जमानती बनाया गया है। 3 से 6 महीने की छोटी कैद और मात्र 1000 से 2000 रुपये का जुर्माना इस गहरे जड़ें जमा चुके अपराध को कम करने के लिए पर्याप्त नहीं है, जो निजी स्वार्थों के लिए महिलाओं का शोषण करता है। संबंधित अधिनियम की धारा 3, 4, 5 और 6 में उस सजा का उल्लेख है जो किसी व्यक्ति द्वारा किसी को डायन के रूप में पहचानने, डायन का इलाज करने का प्रयास करने और उसे हुए किसी भी नुकसान के लिए दी जाएगी। जबकि धारा 7 में मुकदमे की प्रक्रिया बताई गई है।

इसके विपरीत, छत्तीसगढ़ जादू टोना अत्याचार (रोकथाम) अधिनियम, 2005 में सख्त सजाएं हैं, लेकिन मामले आमतौर पर अदालतों में लंबित रहते हैं या पहली बार में दर्ज नहीं किए जाते हैं, और अपराधियों को सजा मिलने के बाद भी पीड़ितों का जीवन कठिन और सामाजिक तिरस्कार से भरा रहता है, बिना किसी मुआवजे के। महाराष्ट्र ने 2013 में अपना प्रगतिशील अंधविश्वास और काला जादू विरोधी अधिनियम लागू किया था। 2015 में, राजस्थान जादू टोना रोकथाम अधिनियम के तहत 7 साल तक की कैद और आजीवन कारावास के साथ–साथ 1 लाख रुपये से कम का जुर्माना या दोनों का प्रावधान किया गया।

असम जादू टोना (निषेध, रोकथाम और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के तहत, किसी महिला को चुड़ैल कहना संज्ञेय, गैर–जमानती और गैर–समझौता योग्य अपराध है, जिसके तहत 7 साल की कैद और 5 लाख रुपये तक का जुर्माना हो सकता है।

हालांकि हमारे देश में जिन राज्यों में डायन–संबंधी अपराधों की संख्या सबसे अधिक है, वहां कानून मौजूद हैं, लेकिन इस प्रथा के जारी रहने का कारण इसका अप्रभावी कार्यान्वयन है। बड़ी संख्या में मामलों की कम रिपोर्टिंग, अप्रभावी कानूनी जांच, सामाजिक दबाव, कानूनों की दुर्गमता, जागरूकता की कमी, निष्फल पुनर्वास प्रक्रिया और कठोर दंडों का अभाव इस समस्या को और भी गंभीर बना देते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में, मानवाधिकार समूहों ने इन अपराधों से निपटने के लिए राष्ट्रव्यापी कानून की मांग करते हुए अभियान चलाया है। वे डायन–संबंधी कानूनों में यौन हिंसा, मानहानि, सार्वजनिक अपमान आदि जैसे अपराधों को शामिल करने की वकालत करते हैं, जो महिलाओं की कामुकता को विशेष महत्व देते हैं और निम्न जातियों और अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्यों को भी निशाना बनाते हैं।

वर्तमान दृष्टिकोण बहुत ही अधूरा है, जहां हम केवल समस्या के कानूनी पहलू पर ही चर्चा कर सकते हैं। डायन–संबंधी अपराधों की पूरी श्रृंखला को कवर करने में कानून अपर्याप्त हैं, जिससे सख्त और विशिष्ट कानूनों और उससे भी सख्त कार्यान्वयन की आवश्यकता उत्पन्न होती है। यह देखना बेहद दुखद और दुर्भाग्यपूर्ण है कि 21वीं सदी में भी डायन प्रथा या चुड़ैल शिकार जैसी प्रथाएं जारी हैं। यह हमारी तथाकथित सभ्यता और आधुनिक. ीकरण पर कलंक है। राजस्थान की एक महिला ने लॉजिकल इंडियन की टीम को चुड़ैल के बारे में बताते हुए कहा, ''वह मानव रूप में एक शैतान है जो मानव रक्त और मांस पर जीवित रहती है। उसने जादू–टोना में महारत हासिल कर ली है और सिर्फ आंखों में देखकर ही आपको जला सकती है।''

कानून से ऐसी प्रथा को पूरी तरह से खत्म नहीं किया जा सकता क्योंकि यह बहुत गहराई से जड़ जमा चुकी है। शिक्षा और व्यापक जागरूकता अभियान समय की मांग हैं। बदलाव तभी आएगा जब हम खुद बदलाव के लिए तैयार होंगे। लोगों को ऐसी बुरी प्रथाओं को भूलना होगा और समानता की अवधारणा को स्वीकार करने के लिए तैयार रहना होगा।

(साभारः theamikusqriae.com)

काला जादू का गढ़ बना मोरीगांव

देश के विभिन्न राज्यों में डायन प्रथा के खिलाफ कानून होने के बावजूद अब तक इस सामाजिक कुरीति पर अंकुश नहीं लग सका है। असम सरकार का दावा है कि इस कानून के प्रावधान दूसरे राज्यों के ऐसे कानूनों के मुकाबले कठोर हैं, लेकिन सामाजिक कार्यकर्ताओं का कहना है कि महज कानून बना कर सदियों पुरानी इस कुप्रथा को खत्म करना संभव नहीं है। इसके लिए बड़े पैमाने पर सामाजिक जागरूकता जरूरी है।

देश में डायन प्रथा कब से शुरू हुई, इसका कोई प्रामाणिक इतिहास तो नहीं मिलता लेकिन यह सदियों पुरानी है। राजस्थान के ग्रामीण इलाकों में डाकन या डायन प्रथा कोई छह–सात सौ साल पहले से चलन में थी। इसके तहत अपनी जादुई ताकतों के कथित इस्तेमाल से शिशुओं को मारने के आरोप में महिलाओं की पीट–पीट कर हत्या कर दी जाती थी। उस दौर में वहां हजारों औरतें इस कुप्रथा का शिकार हुई थीं। राजपूत रियासतों ने 16वीं सदी में कानून बना कर इस प्रथा पर रोक लगा दी थी। वर्ष 1553 में उदयपुर में पहली बार इसे गैर–कानूनी घोषित कर दिया गया था, बावजूद इसके यह बेरोक–टोक जारी रही।

कुछ जानकारों के मुताबिक, यह प्रथा असम के

मोरीगांव जिले में फली–फूली। इस जिले को अब काले जादू की भारतीय राजधानी कहा जाता है। दूर–दराज से लोग काला जादू सीखने यहां आते हैं। एनसीआरबी के आंकड़ों के मुताबिक राज्य में वर्ष 2001 से 2014 के बीच डायन होने के आरोप में 464 महिलाओं की हत्या कर दी गई, उनमें से ज्यादातर आदिवासी तबके की थीं। लेकिन सामाजिक कार्यकर्ताओं का दावा है कि एनसीआरबी के आंकड़े तस्वीर का असली रूप सामने नहीं लाते। डायन के नाम पर होने वाली हत्याओं की तादाद इससे कई गुनी ज्यादा है,लेकिन ग्रामीण इलाकों में डायन के खिलाफ लोगों की एकजुटता की वजह से ज्यादातर मामले पुलिस तक नहीं पहुंच पाते।

आखिर किसी को डायन करार देने का पैमाना क्या है? सामाजिक कार्यकर्ताओं का कहना है कि ग्रामीण और खासकर आदिवासी लोग किसी प्राकृतिक विपदा या बच्चों की मौत किसी गंभीर बीमारी के फैलने की स्थिति में लोग पहले नीम हकीमों या ओझाओं की शरण में जाते हैं। जब उन झोला छाप डॉक्टरों और ओझाओं से कुछ नहीं हो पाता तो वह पास–पड़ोस की किसी महिला को इसके लिए जिम्मेदार बताते हुए उसे डायन करार दे देते है। मौजूदा दौर में भी गांवों में स्वास्थ्य सुविधाएं बेहतर नहीं होने की वजह से ऐसे डॉक्टर और ओझा ही लोगों का सबसे बड़ा सहारा हैं। ओझा की ओर से डायन करार दी गई महिला का उत्पीड़न शुरू होता है जो उसकी जान के साथ ही खत्म होता है। ओझा के मुंह से निकला एक शब्द ही गांव के लोगों के लिए ब्रह्मवाक्य बन जाता है और लोग कानून हाथों में लेकर उस कथित डायन को उसके कर्मों की सजा दे देते हैं। ऐसी महिलाएं अक्सर किसी छोटी जाति की होती हैं। ग्रामीण इलाकों में संपत्ति हड़पने या आपसी रंजिश के लिए भी इस कुप्रथा की आड़ ली जाती है। खासकर किसी विधवा को डायन करार देकर मारने के बाद उसकी संपत्ति हड़पना आसान है। झारखंड में आदिवासियों के अधिकारों के लिए काम करने वाले अजिथा सुशान जार्ज कहते हैं, ''डायन प्रथा में ओझाओं की भूमिका सबसे अहम है। अगर वह किसी का इलाज करने में नाकाम रहते हैं तो इसका ठीकरा किसी महिला पर फोड़ते हुए उसे डायन बता देते हैं।'' एक अन्य कार्यकर्ता जेवियर दास कहते हैं, ''झारखंड में तो यह कुप्रथा इतनी गहरी जड़ें जमा चुकी हैं किसी प्राकृतिक विपदा या महामारी के फैलते ही लोग ओझाओं की मदद से डायन की तलाश में जुट जाते हैं।''

(साभार : www.dw.com)

कविता

डायन

अनुज बेसरा

पुरखों ने कहा था
प्रकृति से जुड़े रहना।
पुरखों ने कहा था
प्रकृति से जुड़े रहना।

रोज सुबह उठकर बुधनी
खुले बाल, सफेद कपड़े और कोमल मन से
जाती थी सरना,
जहाँ पुरखे हमारे मर के भी
जिन्दा थे मसान बनकर।
गोहराती थी उन्हें, पेड़ों को आधार मानकर
समृद्धि के लिए।

बुधवा भी जाता था उसी सरना में
अपने पुरखों के लिए,
काफी पसंद करता था वह बुधनी को।
उसकी यह कोमलता देख
शायद वह उसमें प्रकृति देखता था।

करके नेक दस्तूर ब्याह लाया उसे
अपने घर पूरे रीति–रिवाज से
परिवार के साथ–साथ गाँव वाले भी खुश थे
क्योंकि खस्सी–भात खाए थे
वे भी तन के।

सब कुछ ठीक था
सब खुश थे, गाँव वाले भी
तभी जाति बहिष्कार किए हुए खोईर से
आया एक मंदिर और गिरजा,
आधुनिकता और सभ्य होने का परिभाषा लेकर
चंगाई से चंगा होने
राम कथा से राममय होने का भूत
पुरखों को भुला रहा था,
गिरजाघर की चोटी ऊपर
उठ रही थी,
भगवान के मंदिर का क्षेत्रफल भी बढ़ रहा था
और उनका अतिक्रमण भी।

दोनों के रहनुमाओं का पेट निकल रहा था
लेकिन भक्तों के पेट अभी भी सूखे थे।
चंगाई स्वर्ग नरक का डर
उन्हें दबोच चुका था।

बुधनी अभी भी सरना जाती थी
लेकिन अब संकरे खोईर से, क्योंकि
जिस रास्ते वह जाती थी
वहाँ अब मंदिर बन गया था।

कोरोना की महामारी ने उनसे
उनके पति को छीन लिया था
लेकिन उसके लिए अभी भी वे जिन्दा थे
पुरखा मसान बनकर।

उसी सरना में
जहाँ वह नई फसल के दाने चढ़ाकर
भीतर पूजा कर, खाने से पहले
एक कांवर जमीन में उसके नाम से गिरा कर
जिंदा रखी थी।

पति के मरने के बाद
सभी की निगाहें उस पर टिकी थीं
क्योंकि जमीन उसकी एकड़ों में थी।
देवर, दिल ही दिल में खेलने लगे थे शतरंज
सफेद कपड़े अब लगने लगे थे, फीके
क्योंकि साजिश, जमीन उसकी हड़पने की
चल रही थी मन में।

एक दिन पड़ोस में
हुई एक बच्चे की मौत।
ठीकरा फोड़ा गया बुधनी के सर पर
सफेद साड़ी तो डायन ही पहनती हैं
सोहराय में नंगा नाचती हैं अंधेरे में!
झूठी कहानियाँ गढ़ने लगे अनेक,
रास्ते से गुजरते उसके, अब खोईर हो जाती सुनसान–
कहते डायन आ रही है।

(साभार : yuvaniya.in)

बिहार सरकार
मध निषेध उत्पाद एवं निबंधन विभाग
नशे से होने वाले दुष्परिणाम
स्वास्थ्य की क्षति
आर्थिक हानि
घरेलू हिंसा - झगड़े
सड़क दुर्घटना
समाज में शर्मिंदगी
शिक्षा का नुकसान
किसी भी शिकायत एवं सूचना हेतु संपर्क करें हमारे टोल फ्री नंबर पर
15545
या
1800-345-6268
नशा नहीं, जीवन चुनें
मध निषेध उत्पाद एवं निबंधन विभाग बिहार द्वारा जनहित में जारी
Follow Us On:
#NashaMuktBihar

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13

equityasia@gmail.com
www.emanjari.com
06122270171
6207092051
7979772023

RNI Title Code: BIHBIL02442

© इक्विटी फाउंडेशन